ऋग्वेद
ओ३म्
यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

मूल्य: ₹ 20

वर्ष : 32 फाल्गुन-चैत्र वि०स० 2076-77 अंक : 3 मार्च 2020

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

धर्म रक्षक, ऋषि दयानन्द की खोजपूर्ण जीवनी के लेखक,
शास्त्रार्थ महारथी, समाज सुधारक,
अरबी–उर्दू–फारसी के विद्वान एवं अनेक ग्रंथों के लेखक

रक्तसाक्षी पंडित लेखराम आर्यमुसाफिर

बलिदान दिवस ६ मार्च, १८९७

पवमान पत्रिका के समस्त पाठकों को

होली (फाल्गुन पूर्णिमा)

पर्व की हार्दिक शुभकामनाएं

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद
अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

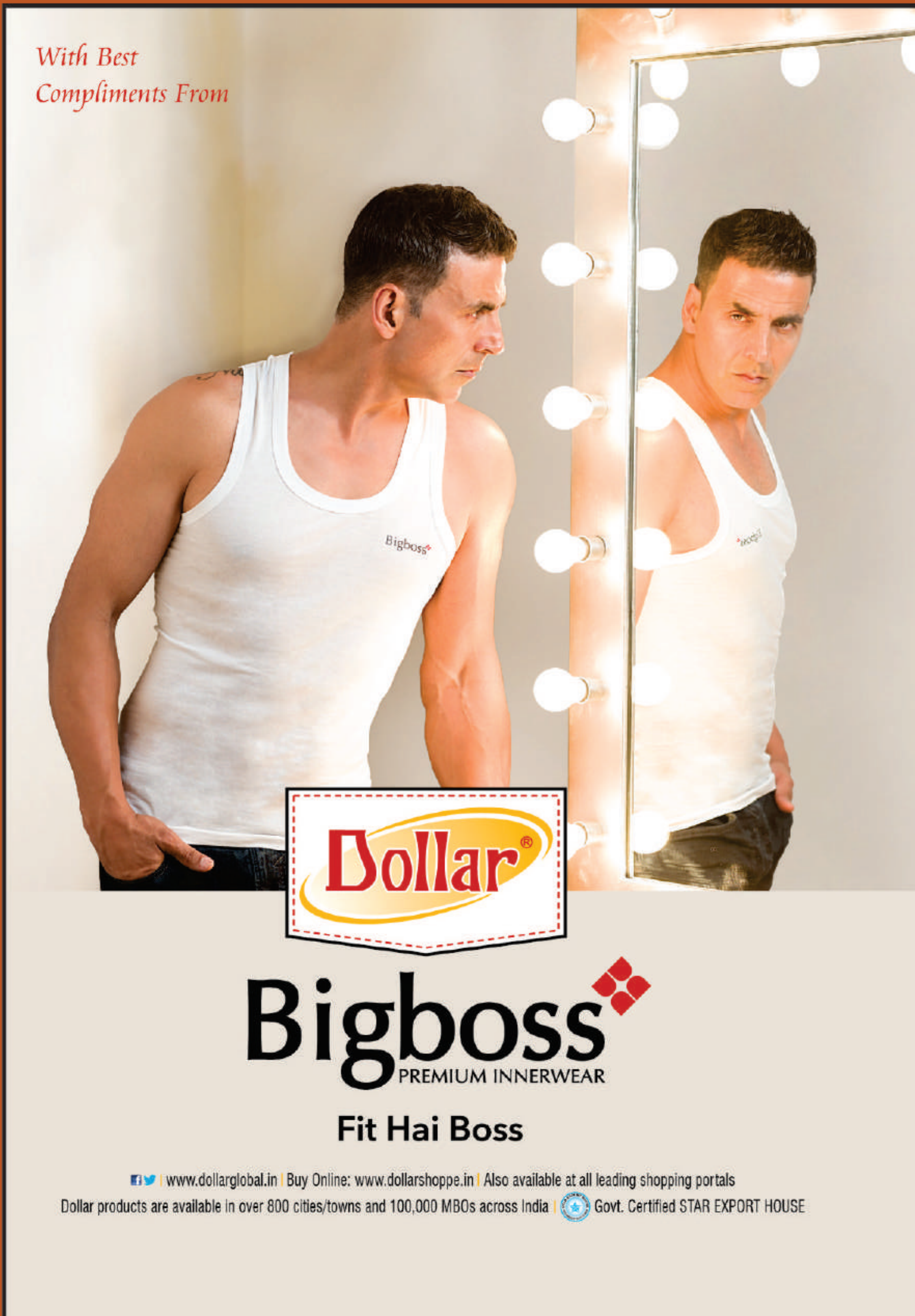
With Best
Compliments From
Bigboss
Dollar®
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR
Fit Hai Boss
www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals
Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

ओ३म्

पवमान

वर्ष—32 अंक—3

फाल्गुन—चैत्र 2076 विक्रमी मार्च 2020

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,120 दयानन्दाब्द : 196

★

—: संरक्षक :—

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

मो. : 9410102568

★

—: अध्यक्ष :—

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

—: सचिव :—

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

—: आद्य सम्पादक :—

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

—: मुख्य सम्पादक :—

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 9336225967

★

—: सम्पादक मण्डल :—

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य—

मो. : 9412985121

★

—: कार्यालय :—

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून—248008

दूरभाष : 0135—2787001

मोबाईल : 7310641586

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालंकार	3
समस्त आश्रमों का आधार है गृहस्थ जीवन	डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री	4
वैदिक धर्म और होली का पर्व	मनमोहन कुमार आर्य	8
लाला गंगाराम की प्रेरक घटनायें	स्वामी स्वतन्त्रानन्द सरस्वती	11
देश हित रहित जीवन उचित नहीं	मनमोहन कुमार आर्य	14
पं. सत्यानन्द वेदवागीश जी का महाप्रयाण	डॉ. जयदत्त उप्रेती शास्त्री	17
पं. रामचन्द्र देहलवी का योगदान	मनमोहन कुमार आर्य	19
आश्रम के शिविरों व उत्सव के आयोजन		22
महर्षि दयानन्द से परहेज क्यों?	डॉ. जयदत्त उप्रेती शास्त्री	23
किराये की गाड़ी	महात्मा आनन्द स्वामी जी	24
चन्दन के कोयले न बनाओ	महात्मा आनन्द स्वामी जी	25
मानव—चक्षु	वैद्यरत्न प्रताप सिंह	26
ऋषिभक्त श्री आदित्य प्रताप सिंह	मनमोहन कुमार आर्य	29
दानदाताओं की सूची		31

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. ''वैदिक साधन आश्रम''	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. ''पवमान''	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. ''वैदिक साधन आश्रम''	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन''	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000 / — प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000 / — प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000 / — प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1. वार्षिक मूल्य (12 प्रतियाँ प्रति वर्ष) — रु. 200 / — वार्षिक
2. 15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य — रु. 2000 / —

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

तप का स्वरूप

तप का अर्थ है— पीड़ा सहना, घोर कड़ी साधना करना, मन का संयम रखना आदि। महर्षि दयानन्द के अनुसार "जिस प्रकार सोने को अग्नि में डालकर इसका मल दूर किया जाता है उसी प्रकार सद्गुणों और उत्तम आचरणों से अपने हृदय, मन और आत्मा के मैल को दूर किया जाना तप है। गीता में तीन प्रकार के तप बताए गए हैं— शारीरिक, जो शरीर से किया जाये। वाचिक, जो वाणी से किया जाये और मानसिक, जो मन से किया जाये। देवताओं, गुरुओं और विद्वानों की पूजा अर्थात् यथा योग्य सेवा और सुश्रूषा करना, ब्रह्मचर्य और अहिंसा शारीरिक तप हैं। ब्रह्मचर्य का अर्थ हैः शरीर के बीजभूत भाग तत्त्व की रक्षा करना और ब्रह्म में विचरना या अपने को सदा परमात्मा की गोद में महसूस करना। किसी को मन, वाणी और शरीर से हानि न पहुंचाना अहिंसा है। हिंसा और अहिंसा केवल शारीरिक ही नहीं अपितु वाचिक और मानसिक भी होती हैं। वाणी के तप से अभिप्राय हैः ऐसी वाणी बोलना जिससे किसी को हानि न पहुंचे। सत्य, प्रिय और हितकारक वाणी का प्रयोग करना चाहिए। वाणी के तप के साथ ही स्वाध्याय की बात भी कही गई है। वेद, उपनिषद आदि सद्ग्रन्थों का नित्य पाठ करना और अपने द्वारा किये जा रहे नित्य कर्मों पर भी विचार करना स्वाध्याय है। मन को प्रसन्न रखना, सौम्यता, मौन, आत्मसंयम और चित्त की शुद्धभावना यह सब मन का तप है। गुणवत्ता के आधार पर तप तीन प्रकार के होते हैं— सात्त्विक तप जो परम श्रद्धा से किया जाता है जिसमे फल के भोग की आकांक्षा नहीं होती है और सबके हित के लिए किया जाता है। राजस तप— अपना सत्कार चारों ओर बढ़ाने की इच्छा से किया जाने वाला तप राजस तप कहलाता है। तामस तप— पंचाग्नियों के बीच शरीर को कष्ट देना, शरीर के किसी अंग को वर्षों निष्क्रिय करके रखना आदि कर्मों जिनसे करने वालों और देखने वालों दोनों को कष्ट हो और किसी का भी कोई हित न हो तामस तप कहलाते हैं। इस प्रकार हमारे अनेक शास्त्रों में तप की महिमा का बखान करते हुए मनुष्य को तप के द्वारा अपने जीवन को विकसित करते हुए उच्च स्थिति प्राप्त करने के साधन मिलते हैं। हम जब शास्त्रों का स्वाध्याय नहीं करते हैं या भ्रम में पड़कर विपरीत साधनों का प्रयोग करने लगते हैं तो दिशाभ्रमित होकर अनुचित मार्गों को ही तप समझ बैठते हैं। यह हमारी बहुत बड़ी भूल होती है। हमें विद्वान् गुरुओं और सत्साहित्य के स्वाध्याय से पहले तप के वास्तविक स्वरूप को समझना चाहिए। ऐसा करने के बाद हम जो तप के साधन अपनायेंगे उनसे हमें वास्तविक ज्ञान और मार्ग प्राप्त हो सकेगा। मनुस्मृति में कहा गया है— "विद्यातपोभ्याम् भूतात्मा बुद्धि ज्ञानेन शुद्धति" अर्थात् विद्या और तप से मनुष्य की आत्मा और ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है और हमें वास्तविक ज्ञान प्राप्त होता है। इसलिए तप के साथ विद्या और ज्ञान का होना भी अत्यंत आवश्यक है। शास्त्रों के अनुसार तप से मन का मैल दूर होता है और पाप का नाश होता है। इसलिए हमें अपने को ऊपर उठाने के लिए तपस्वी बनना चाहिए।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

ओ३म्

वेदामृत

हमें क्षमा करो

ओ३म् तत् सत् परब्रह्मणे नमः।।

इमामग्ने शरणिं मीमृशो नः, इममध्वानं यमगाम दूरात्।
आपिः पिता प्रमतिः सोम्यानां, भृमिरस्यृशिकृन् मर्त्यानाम्।।

ऋग्वेद 1/31/16

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आंगिरसः। देवता अग्निः। छन्दः त्रिष्टुप्।

(अग्ने) हे अग्रणी तेजस्वी परमात्मन्! (नः) हमारी (इमां) इस (शरणिं) {व्रतलोपरूप} हिंसा को (मीमृशः) क्षमा करो। (इमं) इस (अध्वानं) {भ्रान्त} मार्ग के अवलम्बन को भी {क्षमा करो}, (यं) जिस पर {हम} (दूरात्) दूरी तक (अगाम) चल चुके हैं। {तुम} (सोम्यानां) सौम्य जनों के (आपिः) बन्धु, (पिता) पिता {और} (प्रमतिः) शुभचिन्तक {हो}, मर्त्यानां मर्त्यों को (भूमिः) घुमानेवाले {और} (ऋषिकृत्) ऋषि बना देनेवाले (असि) हो।

अपने जीवन में हम अन्य हिंसाएं करते हों या न करते हों, पर व्रत–लोपरूप आत्महिंसा तो निरन्तर करते रहते हैं। **कभी हम सत्य–भाषण का व्रत लेते हैं, कभी नित्य सन्ध्या–वन्दन और अग्निहोत्र करने का व्रत लेते हैं, कभी नियमित व्यायाम और प्रातः भ्रमण का व्रत लेते हैं, कभी ब्रह्मचर्य–पालन का व्रत लेते हैं, कभी वेद के स्वाध्याय का व्रत लेते हैं, पर शीघ्र ही इन व्रतों को तोड़ भी देते हैं।** हे परमात्मन्! तुम अग्नि हो, अग्रणी होकर सबका मार्ग–दर्शन करने वाले हो। हमारा भी मार्ग–दर्शन करो। **तुम व्रतपति हो, हमें भी व्रतों पर दृढ़ रहने की शक्ति प्रदान करो। जो व्रत–भंगरूप हिंसा हम अब तक करते रहे हैं, उसके लिए हमें क्षमा करो।**

व्रत–लोप के अतिरिक्त दूसरा अपराध हमने यह किया है कि हम अब तक भ्रान्त राह पर चलते रहे, और उस भटकी राह पर चलते–चलते बहुत दूर निकल आये। अब यह देखकर हमारा सिर चकरा रहा है कि जितना गलत रास्ता हम पार कर चुके हैं, उससे वापिस लौटने के लिए हमें अनवरत कितना महान् प्रयास करना पड़ेगा। **हे प्रकाशमय अग्निदेव! तुम्हीं प्रकाश देकर हमें उस कुमार्ग से वापिस लौटाओ। तुमसे दूर होकर जो हम भ्रान्त पथ पर चल पड़े, उसके लिए भी तुम हमें क्षमा करो।**

तुमसे क्षमा–याचना हम इस कारण नहीं कर रहे कि हम दण्ड से बचना चाहते हैं। हम जानते हैं कि दुष्कर्मों का दण्ड न देना रूप क्षमा तुम कभी नहीं करते हो। अतः तुम्हारे दण्ड का हम स्वागत करते हैं। व्रत–लोप और उन्मार्गगामिता का दुष्परिणाम हम पर्याप्त भोग चुके हैं और अब भी यदि कुछ भोग शेष है तो उसके लिए भी हम तैयार हैं। **पर क्षमा–याचना हम भविष्य में उक्त अपराधों से बचने के लिए कर रहे हैं। क्षमा वही मांगता है जो अपने अपराध को स्वीकार करता है और उस अपराध से भविष्य में बचे रहने की जिसके मन में उत्कट चाह होती है। उसी मनोवृत्ति के साथ हम तुम्हारे सम्मुख उपस्थित होकर क्षमाप्रार्थी हो रहे हैं।**

हे प्रभो! तुम सौम्यजनों के बन्धु, पिता और हितचिन्तक हो। तुम्हारी कृपा से हम भी सौम्य बन जाएं। तुम 'भूमि' और 'ऋषिकृत्' हो। जैसे कुम्भकार मिट्टी को चाक पर घुमाकर उत्तमोत्तम पात्रों के रूप में परिणत कर देता है, वैसे ही तुम अपने दिव्य चक्र पर घुमाकर सामान्य मर्त्य को भी ऋषि बना देते हो। हे देव! तुम हम पर भी अपनी कृपा बरसाओ, हम मर्त्यों को भी ऋषि बना दो।

आचार्य डा. रामनाथ वेदालंकार

(वेद–मंजरी ग्रन्थ से साभार)

समस्त आश्रमों का आधार है गृहस्थ जीवन

—डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री

आर्य जीवन की आधारशिला चार आश्रम हैं। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास ये तीन आश्रम अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए किसी न किसी प्रकार से गृहस्थ आश्रम पर निर्भर रहते हैं, इसलिए यह समस्त आश्रमों का आधार कहलाता है। विवाह के बाद स्त्री और पुरुष गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर एक नया घर बनाते हैं। नैतिक जीवन के जो संस्कार लोगों में बाल्यावस्था में पड़ते हैं उनका विकास गृहस्थ जीवन में होता है। इस आश्रम में प्रवेश करते ही दायित्वों का क्रम आरम्भ हो जाता है। इस जीवन में प्रवेश करने पर पति—पत्नी न केवल त्याग की आदत डालते हैं अपितु एक दूसरे का ध्यान रखना भी सीखते हैं। पहले तो केवल पुरुष का कर्त्तव्य था कि वह पूरे परिवार के भरण—पोषण के लिए पुरुषार्थ करते हुए जीवनयापन करे। आज आधुनिकता से भरे इस युग में इस दायित्व को पति व पत्नी दोनों समान रूप से मिलकर निभाते हैं। प्रायः यह सुना जाता है कि माता—पिता संतान का पालन—पोषण इसलिए करते हैं कि वे बड़ा होकर उनकी सेवा करेंगे, परन्तु यह सोच सही नहीं है। संतान का पालन करना माता—पिता का दायित्व है। इसलिए इस दायित्व को निस्वार्थ भावना के साथ निभाना ही श्रेयस्कर है। गृहस्थ जीवन की सफलता के लिए धनार्जन अत्यंत आवश्यक है। इसलिए प्रत्येक गृहस्थी का कर्त्तव्य है कि वह अधिक से अधिक पुरुषार्थ करते हुए धनार्जन करे, परन्तु इसमें इतना अधिक लिप्त न हो जाए कि उसके पास अन्य कार्यों के लिए समय न रहे। गृहस्थ के पांच महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य माने गए हैं। ये कर्त्तव्य पंच महायज्ञ के नाम से जाने जाते हैं। प्रत्येक गृहस्थ को ब्रह्म यज्ञ, देव यज्ञ, पितृ यज्ञ, अतिथि यज्ञ और बलिवैश्व—देव यज्ञ अवश्य करने चाहिएँ।

अब हम विचार करते हैं कि गृहस्थ जीवन एक योग साधना क्यों है। योग का अर्थ है— मिलाना या जोड़ना। मनुष्य अपने आप में एक प्रकार से अपूर्ण होता है और इस अपूर्णता को मिटाने के लिए किसी दूसरी शक्ति से अपने को जोड़कर अपनी अपूर्णता को दूर करते हुए अधिक शक्ति संचय करता है। योग का उद्देश्य भी एक प्रकार से यही है। अनेक प्रकार के योगों में गृहस्थ योग भी एक योग पद्धति है। प्राचीन काल में अधिकांश ऋषि गृहस्थ होते थे। वशिष्ठ के सौ पुत्र थे। अत्रि की पत्नी अनुसुइया और गौतम की पत्नी अहिल्या थी। महर्षि याज्ञवल्क्य की गार्गी और मैत्रेयी नाम की दो पत्नियां थीं। गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही उन्होंने न केवल तप करते हुए आत्मोन्नति की, अपितु निवार्ण की प्राप्ति की थी। योगीराज कृष्ण को हम सब भली भांति जानते हैं, जिन्होनें उत्तम कोटि की संतान की प्राप्ति के लिए अनेक वर्षों तक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए तप किया था। महर्षि मनु के अनुसार पुरुष अपनी पत्नी और संतान से मिलकर ही एक पूर्ण मनुष्य बनता है। कई लोगों की यह सोच है कि गृहस्थाश्रम में रहकर व्यक्ति आध्यात्मिक प्रगति नहीं कर सकता है। आत्मोन्नति करना अन्तःकरण को पवित्र करते हुए विवेक प्राप्त करना है, जिसका बाह्य संसार से अधिक सम्बन्ध नहीं है, अपितु यह आन्तरिक उन्नति है। जिस प्रकार ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी साधना के माध्यम से अपने लक्ष्य को पा सकते हैं, उसी

प्रकार से गृहस्थ भी साधना के मार्ग पर आत्मोन्नति करते हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। परमेश्वर की साधना में मनुष्य के जीवन का लक्ष्य परमेश्वर को पाना या मोक्ष प्राप्त करना है। गृहस्थ संचालन के सम्बन्ध में दो दृष्टिकोण देखे जाते हैं। प्रथम में व्यक्ति, मैं और मेरा के अहंकार में लिप्त होकर स्वार्थ की भावना से वशीभूत रहता है, दूसरे में आत्मत्याग, सेवा, प्रेम और परमार्थ की भावना से जीवन निर्वाह किया जाता है। पहला दृष्टिकोण बंधन, पतन और पाप की ओर ले जाता है। दूसरा दृष्टिकोण मुक्ति, उत्थान, पुण्य और मोक्ष मार्ग की ओर ले जाने वाला होता है। अतः गृहस्थ जीवन में रहते ही व्यक्ति यदि अपना सही मार्ग चुनता है, तो वह एक प्रकार से योग की साधना करना ही कहलाएगा।

घर के प्रत्येक सदस्य को सद्गुणी, सदाचारी और धर्मपरायण बनकर जीवन यापन करना चाहिए। धर्मपूर्वक धन की प्राप्ति करते हुए ही जीवन निर्वाह करना उसके जीवन का उद्देश्य होना चाहिए। जो मनुष्य घर में रहते हुए ही एक योगी की भांति जीवन व्यतीत करना चाहता है, उसको सदा ही यह विचार मन में बनाए रखना चाहिए कि वह एक योगी है और उसका जीवन साधनामय है। दूसरे क्या करते हैं और क्या सोचते हैं, इसकी उसे तनिक भी परवाह नहीं करनी चाहिए। उसे अपनी आनन्दमयी साधना को निरन्तर जारी रखना है, यह संकल्प सदा मन में दृढ़ बनाए रखना चाहिए। ऐसे साधक को सोने से पूर्व दिन भर के कार्यों पर विचार करते हुए आत्मावलोकन करना चाहिए। जैसे– आज मेरे व्यवहार में क्या भूलें हुईं? क्या मैंने स्वार्थ से प्रेरित होकर कोई कार्य किया? क्या सभी कार्य एक अच्छे गृहस्थ की भांति किए गए? यदि इन प्रश्नों के उत्तर में कोई आपत्तिजनक बातें पाई गईं तो अगले दिन उन पर सुधार करना चाहिए। इस प्रकार आचरण करते हुए एक दिन आदर्श जीवन चर्या प्राप्त की जा सकती है। गृहस्थ योग साधक के मार्ग में नित नई कठिनाइयां आती रहती हैं। यदि कोई ऐसी घटना हो जाती है जो आदर्शों के प्रतिकूल हो तो अपने स्वभाव पर विजय पाते हुए, ऐसी घटना दोबारा न होने पाए, ऐसा संकल्प करना चाहिए।

गृहस्थ परिवार में रहते हुए ही स्त्री व पुरुष स्वाध्याय के द्वारा उपासना के मार्ग की ओर अग्रसर हो सकते हैं। शतपथकार ने स्वाध्याय के लाभों का वर्णन करते हुए एक मंत्र (11.5.7.1) में कहा है कि इससे व्यक्ति ''युक्तमना भवति'' अर्थात् समाहित मन वाला या स्थिरचित्त हो जाता है। स्वाध्याय का दूसरा लाभ है कि वह, ''अपराधीनो भवति'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति किसी की पराधीनता स्वीकार नहीं करता है। वह इन्द्रियों के रूप, रस, गन्ध आदि विषयों के वश में नहीं रहता है। तीसरा लाभ है–''अहरहरर्थान् साधयते'' अर्थात् वह दिनों–दिन अर्थों की सिद्धि करता है। यहां शतपथकार का अर्थ से आशय शब्द के पीछे जो गहन अर्थ है, उसकी सिद्धि कर लेना है। चौथा लाभ है–''सुखं स्वपिति'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति चैन की नींद सोता है। पांचवां लाभ है– ''परम चिकित्सक आत्मनो भवति'' अर्थात् वह अपनी आत्मा का चिकित्सक हो जाता है, वह अपने मानसिक रोगादि विकारों की स्वयं चिकित्सा कर सकता है। छठा लाभ है– ''इन्द्रियसंयमः भवति'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति इन्द्रिय संयमी हो जाता है। सातवां लाभ है– ''एकरामता भवति'' अर्थात् वह केवल एक तत्त्व परमात्मा से खेलता है। सांसारिक सभी खेलों से विमुख होकर केवल परमात्मा में ही आनन्द लेता है। आठवां लाभ है– ''प्रज्ञावृद्धिर्भवति'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति पण्डित बन जाता है। नवां लाभ है– ''ब्राह्मण्यम्'' अर्थात् उसमें ब्रह्ममण्यता आ जाती है। ब्रह्ममण्यता के आने से उसमें सभी प्राणियों के हित की कामना,

सर्वदुःखानुभूति, संवेदनशीलता, परोपकारिता, स्वार्थत्याग, परमतपस्विता आदि गुण स्वतः आ विराजते हैं। दसवां लाभ है– ''प्रतिरूपचर्याम्'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति वह दर्पण है जिसमें हर सद्‌गुण की प्रतिकृति या छाया देख सकते हैं। ग्यारहवां लाभ है– ''यशः'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति को यश की प्राप्ति होती है। बारहवां लाभ है– ''लोकपक्ति'' अर्थात् उसका लोक–परिपाक हो जाता है या उसे लोक सिद्धि प्राप्त हो जाती है। तेरहवां लाभ है– ''अर्चा–बुद्धि'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति की अर्चना होती है। उसके प्रभाव से जनगण में विनय, श्रद्धा, नम्रता आदि गुण आ जाते हैं और सभी श्रद्धापूर्वक उसका आदर करते हैं। चौदहवां लाभ है– ''दानशीलता'' अर्थात् उसे दान और दक्षिणा की प्राप्ति होती है। पन्द्रहवां लाभ है– ''अज्येयतया'' अर्थात् स्वाध्यायशील से व्यक्ति अज्येय हो जाता है। सोलहवां लाभ है– '' अवध्यता'' अर्थात् वह सभी के लिए अवध्य हो जाता है। सोलहवाँ लाभ यह है– ''अति ह वै पुनर्मृत्युं मुच्यते। गच्छति ब्रह्मणः सात्मताम्।'' अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति पुनर्मृत्यु से मुक्त हो जाता है। वह परमेश्वर के समान परान्तकाल तक जन्म–मृत्यु बन्धन से छूट जाता है। इस प्रकार एक बार के प्रयत्न से यदि उसे ब्राह्मणत्व प्राप्त हो गया तो उसका ब्राह्मणत्व मरता नहीं है और पुनर्जन्म प्राप्त करने पर वह, वहीं से कार्य आरम्भ कर देता है क्योंकि वह स्वाध्याय से ब्रह्म की सात्मता को प्राप्त कर लेता है अर्थात् वेद को आत्मसात कर लेता है, ब्रह्म (आनन्द) को आत्मसात कर लेता है। इसके लिए उपासना अत्यंतावश्यक साधन है। यहां पर उपासना का क्या प्रयोजन है, यह जानना भी आवश्यक है।

उपासना का सही प्रयोजन–

अब हम यह विचार करते हैं कि परमेश्वर की भक्ति और उपासना क्यों करनी चाहिए। वेद में प्रभु के सम्बन्ध में स्तुति, प्रार्थना और उपासना विषयक अनेक मंत्र हैं। इस प्रकार वैदिक–धर्म प्रभु भक्ति के उपदेशों से परिपूर्ण है। जैसा कि लेख के आरम्भ में उपासना का अर्थ स्पष्ट किया गया था, उपासना का शब्दार्थ है– समीप बैठना, संगति में बैठना। इसके द्वारा हम परमेश्वर के समीप, उनकी संगति में बैठते हैं। आम साधक की दृष्टि से देखा जाए तो जो संगति का लाभ है, वही लाभ उपासना का है परन्तु महर्षि ने समस्त वैदिक साहित्य का मंथन कर मनुष्यों के लिए आवश्यक रूप से करणीय जो पंचमहायज्ञ बताए हैं, उनमें ब्रह्मयज्ञ जिसे संध्या भी कहा जाता है, उपासना हेतु महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। परमात्मा के गुणों का चिन्तन करते हुए उसमें ध्यान लगा कर समाधि की अवस्था तक पहुंचना ही उपासना का वास्तविक प्रयोजन है।

उपासना कैसे करें–

महर्षि द्वारा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में उपासना पद्धति निम्न प्रकार बताई गई है– ''अब जिस रीति से उपासना करनी चाहिए, सो आगे लिखते हैं– जब–जब मनुष्य लोग ईश्वर की उपासना करना चाहें, तब–तब इच्छा के अनुकूल एकान्त स्थान में बैठकर, अपने मन को शुद्ध और आत्मा को स्थिर करें तथा सब इन्द्रिय और मन को सच्चिदानन्दादि लक्षण वाले अन्तर्यामी अर्थात् सब में व्यापक और न्यायकारी परमात्मा की ओर अच्छी प्रकार से लगाकर, सम्यक चिन्तन करके, उसमें अपने आत्मा को नियुक्त करें। फिर उसी की स्तुति, प्रार्थना और उपासना को बारंबार करके अपने आत्मा को भली भांति उसमें लगा दें।' इसके बाद महर्षि ने पतंजलि मुनि के योगशास्त्र और उन सूत्रों पर वेदव्यास मुनि के भाष्य के प्रमाणों का उल्लेख किया है जो संक्षिप्त रूप से निम्न प्रकार हैं–

(१) चित्त की वृत्तियों को सब बुराइयों से हटा के शुभ गुणों में स्थिर करके मोक्ष को प्राप्त

करने को 'योग' कहते हैं। और 'वियोग' उसको कहते हैं कि परमेश्वर और उसकी आज्ञा से विरुद्ध बुराइयों में फंस के उससे दूर हो जाना।

(२) जैसे जल के प्रवाह को एक ओर से दृढ़ बांध से रोक देते हैं, तब वह जिस ओर नीचा होता है, उस ओर चल के कहीं स्थिर हो जाता है, इसी प्रकार मन की वृत्ति भी जब बाहर से रुकती है, तब परमेश्वर में स्थिर हो जाती है। चित्त की वृत्ति को रोकने का एक यह प्रयोजन है।

(३) उपासक योगी और संसारी मनुष्य जब व्यवहार में प्रवृत्त होते हैं, तब योगी की वृत्ति तो सदा हर्षशोकरहित, आनन्द से प्रकाशित होकर उत्साह और आनन्दयुक्त रहती है और संसार के मनुष्य की वृत्ति सदा हर्षशोकरूप दुःखसागर में डूबी रहती है। उपासक योगी की तो ज्ञानरूप प्रकाश में सदा बढ़ती रहती है और संसारी मनुष्य की वृत्ति सदा अन्धकार में फंसती जाती है।

(४) सभी मनुष्यों में पांच प्रकार की वृत्तियां क्लिष्ट और अक्लिष्ट भेद से होती हैं। ये वृत्तियां हैं– प्रमाण, विपर्य्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। इन वृत्तियों को अभ्यास और वैराग्य अर्थात् सब बुरे कामों और दोषों से अलग रहकर ही इन्हें रोक कर उपासना योग में प्रवृत्त हुआ जा सकता है।

ब्रह्मयज्ञ या संध्या नित्य सांय और प्रातः सभी श्रेष्ठ जनों द्वारा किया जाना आवश्यक है। इसमें भी केवल मंत्र पाठ और अर्थ पर विचार तक ही सीमित न रहना चाहिए अपितु महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गए उक्त योग मार्ग पर चलना भी अत्यन्त आवश्यक है। कुछ समय मौन रह कर आत्मा और परमात्मा के गुणों का चिन्तन करते हुए ध्यान लगा कर यदि सम्भव हो सके तो समाधि अवस्था तक पहुंचने का प्रयास करना चाहिए। साधना के इस मार्ग पर चलने के लिए गृहस्थ को घर से बाहर अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं है, अपितु घर के वातावरण को ही शुद्ध व पवित्र बनाते हुए उपरोक्त समस्त प्रक्रियाओं को पूर्ण किया जा सकता है। यह भी उल्लेखनीय है कि सामान्य साधकों के लिए बिना किसी गुरु का सान्निध्य प्राप्त किए उपासना के इन कठिन मार्गों पर चलने में कठिनाइयां आ सकती हैं। इसके लिए समय–समय पर आर्यसमाज द्वारा संचालित कई संस्थानों और हिन्दू धर्म की अन्य संस्थाओं के द्वारा भी साधकों के मार्गदर्शन हेतु शिविर लगा कर प्रशिक्षण दिया जाता है। साधक इन स्थलों पर सप्ताह या उससे अधिक समय तक रहकर उपासना का सही तरीका अपना सकते हैं। उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि गृहस्थ आश्रम में ही हम एक योगी की भांति जीवन बिताते हुए मोक्षमार्ग पर आरूढ़ हो सकते हैं।

नेत्रोपयोगी निर्दोष औषधि

डॉ. राधेश्याम रूँगटा

नीम पेड़ पर लगा हुआ मधु कम–से–कम दो वर्ष पुराना आधी छटाँक (यदि शुद्ध कमल मधु मिल सके तो अति उत्तम) एक शीशी में ले लें, उसमें श्वेत पुनर्नवा का रस दस बूँद डाल दें और जस्ते की सींक से मिला दें। दवा तैयार है। इस दवा को प्रातः तथा रात्रि को सोने के समय दोनों आँखों में हाथ की अँगुली से अंजन करें तथा नित्य–प्रति उपयोग करने का नियम बना लें। नेत्र–ज्योति बढ़ेगी, चश्मा लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी और नेत्रों की सुन्दरता बढ़ेगी। अनेक लोगों को लाभ हुआ है।

वैदिक धर्म और होली का पर्व

—मनमोहन कुमार आर्य

वैदिक धर्म एक सम्पूर्ण उत्कृष्ट जीवन शैली है। इसमें पर्वों को मनाने पर किसी प्रकार की रोक नहीं है। पर्व प्रसन्नता एवं उल्लास का एक अवसर होता है। इसके लिये हमारे कुछ प्राचीन मनीषियों ने वर्ष की कुछ तिथियां निर्धारित की हुई हैं जिन पर इन पर्वों को मनाया जाता है। इसका यह लाभ भी होता है कि ऐसे अवसरों पर हम धर्म, संस्कृति तथा स्वस्थ मनोरंजक गीत व संगीत को सुनते हैं जिससे हमारे जीवन में जो शंकायें अथवा कुछ निराशा की स्थिति होती है, वह दूर हो जाती है। **वैदिक धर्म का सन्देश है कि किसी भी परिस्थिति में मनुष्य को निराश नहीं होना चाहिये। उसे हर विपरीत परिस्थिति का अपनी पूरी सामर्थ्य एवं बल से सामना करना चाहिये।** हमारा धर्म अपने सभी अनुयायियों को यह आदेश भी करता है कि किसी भी प्रतिकूल परिस्थितियों में फंसे व्यक्ति की हर प्रकार की सहायता करनी चाहिये जिससे उसका दुःख, कष्ट आदि दूर हो सके। यही कारण है कि हमारा सारा जीवन व्यतीत हो जाता है और हमें कभी कोई बड़ी समस्या अथवा कष्ट आता ही नहीं है। यदि आता भी है तो परिवार, मित्रजनों व पड़ोसियों के सहयोग से दूर हो जाता है। इसके साथ ही वैदिक धर्म व संस्कृति में कुछ नियम ऐसे बनाये गये हैं जिनका पालन करने से मनुष्य के ऊपर समस्यायें व विपदायें आती नहीं या बहुत ही कम आती हैं। **हम प्रतिदिन प्रातः व सायं सन्ध्या करते हैं। इससे हमारा सृष्टि के बनाने व पालन करने वाली सत्ता परमात्मा से मेल व मित्रता होती है। सर्वशक्तिमान ईश्वर का सहाय हमें प्राप्त होता है। ऐसी स्थिति में हमारे ऊपर आने वाली अनेक विपदायें जो सन्ध्या आदि शुभ कार्य न करने पर आ सकती हैं, आती नहीं हैं। ईश्वर उनको आने ही नहीं देता।** ईश्वर की सन्ध्या करने से हमारी आत्मा व मन में ईश्वर से अनेक प्रेरणायें प्राप्त होती हैं। इन प्रेरणाओं को जानने व समझने से हमें बहुत लाभ होता है। हम गायत्री मन्त्र के पाठ व जप में ईश्वर से बुद्धि को श्रेष्ठ प्रेरणायें करने का अनुरोध करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि ईश्वर हमें प्रेरणा देकर हमारा मार्गदर्शन करते हैं जो हमारे व हमारे परिवार के लिये हितकर व उपयोगी होता है।

हमारे जितने भी पर्व व उत्सव होते हैं उन सबमें हम ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित अग्निहोत्र यज्ञ का अनुष्ठान अवश्य करते हैं। इस अवसर पर कुछ भक्ति गीत गाने और अज्ञान दूर करने वाले वेदज्ञान से युक्त किसी ग्रन्थ का स्वाध्याय करने का भी विधान होता है। हम अपने विद्वानों से वार्तालाप कर उनसे उनके अनुभवों से भी लाभ उठाते हैं। उत्सव में नाच व अभद्र गानों का कोई स्थान नहीं होना चाहिये। नैतिकता एवं जीवन को सन्मार्गगामी बनाने के लिये ऐसा करना आवश्यक होता है। हम जो देखते व सुनते हैं उनका हमारे मन व हृदय सहित आत्मा पर संस्कार होता है। उसी से हमारा अच्छा व बुरा निर्माण होता है। जो व्यक्ति अच्छे काम कम और बुरे काम अधिक करते हैं उसका कारण उनका संगति–दोष एवं ज्ञानार्जन में ध्यान न देना होता है। संगति के गुण व दोष दोनों ही मनुष्य के

जीवन में आते हैं। अतः हमें अच्छे लोगों की ही संगति करनी चाहिये। बुरे लोग वह होते हैं जो असत्य बोलते हैं तथा स्वार्थ सिद्धि के लिये उचित व अनुचित का विचार नहीं करते। इन स्वार्थी लोगों में ऐसे भी होते हैं जो कई प्रकार से देश व समाज सहित मानवता का अहित करने वाले काम भी करते हैं। हमारे देश में ऐसे लोगों की विगत कई शताब्दियों से कमी नहीं है। अतः ऐसे लोगों की संगति से बचना चाहिये। इनके विपरीत गुणों वाले सज्जन, चरित्रवान, समाज व देश को महत्व देने वाले तथा उसकी उन्नति के काम करने वाले, दान की प्रवृत्ति वाले, वैदिक धर्म व संस्कृति सहित इसके गौरवमय आदर्श महापुरुषों राम, कृष्ण, दयानन्द आदि के जीवनों से प्रेरणा लेनी चाहिये। आर्यसमाज के सत्संगों में जाने से भी वहां वेदों व शास्त्रों के अच्छे विचार सुनने को मिलते हैं जिनसे हमारे ज्ञान में वृद्धि होने सहित हमें सत्कर्मों को करने की प्रेरणा मिलती है। अतः हमें अपने जीवन को ऊंचा उठाने, उसे सम्मान दिलाने तथा जीवन में दूसरों का मार्गदर्शन करने सहित उनको ऊपर उठने में सहायता करने का मार्गदर्शन भी हमें उत्सवों के अवसर पर की जाने वाले सामूहिक सामाजिक सभाओं आदि गतिविधियों के माध्यम से मिलता है। हमें जीवन को लाभ पहुंचाने वाले इन कार्यों को अवश्य ही करना चाहिये और पर्वों को मनाते समय जो कार्यक्रम आयोजित हों उनमें इन लाभों को सम्मुख रखकर कार्यक्रम बनाने चाहियें।

होली वैदिक धर्म के चार प्रमुख पर्वों में से एक मुख्य पर्व है। इस पर्व का आगमन शरद ऋतु के समाप्त होने तथा वातावरण एवं ऋतु परिवर्तन के साथ होता है। इससे पूर्व शीत ऋतु में सभी प्राणी शीत से त्रस्त रहते हैं। शीत ऋतु में अनेक रोग भी होते हैं। उत्तर भारत के लोगों को वृद्धावस्था में तथा हृदय, बी.पी व कोलेस्टराल आदि रोगों से रोगियों को विशेष कठिनाईयां होती हैं। ऐसा देखा गया है कि अन्य ऋतुओं की तुलना में शीत ऋतु में अधिक लोग मरते हैं। शीत ऋतु के समाप्त होने पर सभी के लिये जीवनयापन आसान हो जाता है। गेहूं सभी अन्नों में प्रमुख अन्न है। अन्न ही हमारा भोजन होता है तथा शरीर को शक्ति प्राप्त कराने का साधन होता है। होली के समय गेहूं व जौ की फसल में नवान्न से युक्त बालियां आ जाती हैं। अब इस अन्न को सूर्य की गर्मी में पकना होता है। होली के अवसर पर कुछ ग्रीष्म प्रदेशों में फसल की कटाई आरम्भ हो जाती है और कहीं कुछ दिन बाद होती है। इस पर्व का महत्व दोनों की कारणों से है। शीत ऋतु की समाप्ती, ग्रीष्म ऋतु का आगमन व उसका स्वागत तथा गेहूं व यव की नई फसल का स्वागत एवं इस उपकार के लिए ईश्वर का धन्यवाद। मनुष्य जीवन पर विचार करें तो मनुष्य का शरीर अन्नमय है। शरीर का पोषण अन्न से होता है और गेहूं व यव अन्न में प्रमुख अन्न हैं। यह गेहूं आदि अन्न पूरे वर्ष भर व उससे कुछ अधिक समय तक हमारी क्षुधा की निवृत्ति करने सहित शरीर का पोषण भी करते हैं। अतः मनुष्य जीवन के आवश्यक एवं अपरिहार्य पदार्थ अन्न के स्वागत व ईश्वर का धन्यवाद करने के लिये हमारे देश के कृषक व अन्य सभी लोग भी इस पर्व को मनाते हैं।

होली का पर्व फाल्गुन मास की पूर्णमास को मनाया जाता है। पूर्णमास ऋतु परिवर्तन का दिन होता है। ऋतु परिवर्तन पर मनुष्य के शरीर में तापक्रम की दृष्टि से कुछ परिवर्तन होता है। शरीर उस परिवर्तन में सहज रूप से ढल जाये इस कारण होली के दिन वृहद यज्ञों को करने का विधान प्राचीन काल से चला आ रहा है। यज्ञ से हानिकारक कीटाणुओं का दुष्प्रभाव दूर होता है। वृहद यज्ञ से घर के भीतर की दूषित वायु भी

बाहर निकल जाती है और बाहर की शुद्ध वायु घर के भीतर प्रविष्ट होकर यज्ञ की आहुतियों से युक्त होकर गुणकारी एवं स्वास्थ्य के लिये हितकार होती है। ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो यदाकदा ही अग्निहोत्र यज्ञ करते हैं। उन बन्धुओं व परिवारों द्वारा होली के दिन यज्ञ करने से विशेष लाभ होता है। किसान अन्न को अपने लिये भी प्रयोग करता है और उसे बाजार में बेच कर अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इस फसल से उसे लगभग 6 माह के अपनी आवश्यकता की पूर्ति और अन्य कार्यों के लिये धन प्राप्त होता है। अतः किसान का अपनी फसल के स्वागत में खुशियां व प्रसन्नता मनाना उचित ही है। इसी कारण होली पर्व को मनाने की परम्परा प्राचीन काल से जारी है।

होली का आगमन शीत ऋतु के वसन्त ऋतु में होता है। इस अवसर पर यव व गेहूं आदि की नई फसल भी तैयार हो जाती है। हमारे कृषक व अन्य सभी जन ईश्वर प्रदत्त मनुष्य की प्रमुख आवश्यकता भोजन की वर्ष भर के लिए प्राप्ति पर स्वाभाविक रूप से प्रसन्न व आनन्दविभोर होते हैं और ईश्वर का धन्यवाद करने के लिये कोई विशेष आयोजन करना चाहते हैं। उसी पर्व व उत्सव की अभिव्यक्ति होली पर्व के रूप में होती है। प्राचीन काल में इस अवसर पर वृहद यज्ञ करके तथा विद्वानों के ईश्वर के मनुष्य जाति पर उपकारों के व्याख्यान सुनकर लोग ईश्वर की उपासना में मग्न हो जाते थे। नये अन्न से आहुतियां देकर ईश्वर के प्रति आभार प्रकट करते थे। हम समझते हैं कि ऐसा करने में किसान का जो सात्विक भाव होता है उससे अन्न उत्पादन में कुछ वृद्धि भी होती है। सभी लोग एक दूसरे को पर्व की शुभकामनायें देते थे। घरों में पकवान बनते थे। इन पकवानों का अपने इष्ट मित्रों व सभी पड़ोसियों में वितरण किया जाता था तथा अब भी करते हैं। एक दूसरे के घर जाकर उनके हालचाल पूछते और अपने व्यंजन उन्हें देकर उनके व्यंजनों का स्वाद लेते थे। सामूहिक भोज के आयोजन भी यत्र—तत्र होते हैं और इस अवसर पर मंगल गान व संगीत आदि के आयोजन भी किये जाते थे। आज इस पर्व के स्वरूप व आयोजन पद्धति में कुछ विकार आ गया है। आर्यसमाज के सभी लोग वेदानुगामी होने से अन्धविश्वासों व कुपरम्पराओं को अपने जीवन में स्थान नहीं देते परन्तु वह अपने ही बन्धुओं को नशा करते देखते हैं जो कि सर्वथा अनुचित होने के साथ वैदिक धर्म एवं संस्कृति में निन्दनीय एवं त्याज्य है। यह मनुष्य की जीवन की उन्नति में बाधक है और हमें ईश्वर से दूर कर उसकी कृपाओं से भी वंचित करता है। इसके सेवन से मनुष्य अपमानित व लज्जित होने सहित रोगी एवं अल्पायु भी होते हैं।

हमारी संस्कृति विश्व की श्रेष्ठ एवं सबके लिए वरणीय संस्कृति है। हमें इसके आदर्श रूप को ही देश, समाज सहित विश्व के सम्मुख उपस्थित करना चाहिये। इसी में हमारा, देश व विश्व का कल्याण निहित है। वर्तमान में हमारा धर्म एवं संस्कृति सुरक्षित नहीं है। इसे विदेशी मत—मतान्तरों एवं नास्तिक विचारों वाले लोगों से अनेक खतरे हैं। यदि आलस्य प्रमाद, धर्म की अवहेलना व उसकी उपेक्षा से वैदिक धर्म व संस्कृति लुप्त हो गई तो हम पाप के भागी होंगे और हमारी सन्ततियां दीर्घ काल तक दुःख भोगेंगी। उसके बाद पता नहीं ऋषि दयानन्द की तरह से वैदिक धर्म का उद्धार करने वाला कोई ऋषि होगा या नहीं? अतः हमें कर्तव्य को पहचान कर धर्म रक्षा के सभी उपाय करने चाहियें। फाल्गुन पूर्णमास वा होली पर्व की सभी देशवासियों को शुभकामनायें एवं बधाई। ओ३म् शम्।

स्टेशन-मास्टर लाला गंगाराम के जीवन की कुछ प्रेरक घटनायें

—स्वामी स्वतन्त्रानन्द सरस्वती

आचार की दृष्टि से तथा अपने स्वभाव में कट्टरपन की दृष्टि सहित अपने नियमों पर अटल रहने से लाला गंगाराम जी विशेष व्यक्ति थे। उनके जीवन की कुछ घटनाएं लिखता हूं। सम्भव है कि कोई सज्जन इनसे लाभ प्राप्त करे।

घटना संख्या 1 : लाला गंगाराम जी सहायक स्टेशनमास्टर थे। स्टेशन मास्टर अंग्रेज था। लाला जी जिला गुजरांवाला के कानेवाली ग्राम के निवासी थे। उस समय की यह घटना है जब उनकी माता का स्वर्गवास हो गया था। वह स्टेशन मास्टर से पूछकर अपने ग्राम चले गये। दैवयोग से उसी दिन एक रेलवे अफसर आ गया। उसने और बातों के साथ-साथ यह भी पूछा कि लाला गंगाराम जी कहां हैं? स्टेशन मास्टर ने उस दिन उनकी हाजरी लगा दी थी, इसलिये कहा-यहां ही हैं। कहीं इधर-उधर होंगे। बात समाप्त हो गई। गंगारामजी दूसरे दिन अपने ग्राम से आ गये। तब उस अफसर ने इनसे पूछ लिया, कल आप नहीं मिले, कहां गये थे? इन्होंने उत्तर दिया, मेरी माता का स्वर्गवास हो गया था, इसलिए मैं ग्राम गया हुआ था, यहां नहीं था। उसने कहा, स्टेशन मास्टरजी तो कहते थे कि आप यहां ही हैं। इन्होंने उत्तर दिया कि उन्होंने मेरे बचाव के लिए ऐसा कह दिया था। वास्तव में मैं अपने ग्राम गया हुआ था।

घटना संख्या 2 : एक बार लाला गंगाराम जी से लाइन क्लियर देने की विशेष भूल हो गई। जब उसका पता लगा, तो लाला जी से वक्तव्य मांगा गया। स्टेशन मास्टर ने इनको उत्तर लिखने को कहा। इन्होंने चार दिन पीछे लिखकर दिया मुझसे भूल हो गई थी। इस भूल के कारण दुर्घटना हो सकती थी। यदि नहीं हुई तो रेल-यात्रियों के सौभाग्य के कारण नहीं हुई। अतः इस भूल का मुझे जो दण्ड दिया जाए, मैं प्रसन्नता से स्वीकार करूंगा।

जब स्टेशन मास्टर ने उसे पढ़ा तो इनसे कहा कि क्या नौकरी छोड़ने की अभिलाषा है? इन्होंने उत्तर दिया नहीं। तब उसने समझाया और कहा-कुछ और लिखकर लाओ।

वह कागज ले गये। तीन दिन पश्चात् पुनः वही उत्तर लाकर दे दिया। स्टोशन मास्टर ने कहा कि यह उत्तर तो पूर्ववाला ही है। लालाजी ने कहा, सत्य यही है, अतः यही उत्तर ठीक है। झूठ कैसे लिखूं?

स्टेशन मास्टर ने वह उत्तर ऊपर भेज दिया। ऊपर से आज्ञा मिली गंगाराम को सावधान

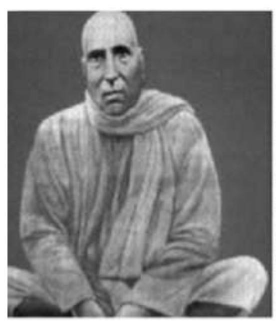

कर दो आगे से ऐसी भूल न करे। स्टेशन मास्टर तथा अन्य रेल-कर्मचारी आश्चर्यान्वित थे कि यह क्या हुआ। अपराध स्वीकार करने पर केवल सावधान ही किया गया। उस अधिकारी से किसी ने पूछा कि आप छोटे-छोटे अपराधों पर अधिक दण्ड दे देते हैं परन्तु लाला गंगाराम ने अपराध किया और इन्होंने स्वीकार भी कर लिया तब भी आपने वार्निंग मात्र देकर छोड़ दिया। स्टेशन मास्टर ने उत्तर दिया-मुझे ऐसा व्यक्ति कभी मिला ही नहीं। उसने अपराध स्वीकार किया। उसका कारण अपनी भूल बताई और उसका

दण्ड लेने के लिए तैयार हो गया। लोग अपराध करते हैं तथा उसे न मानकर पुनः झूठ बोलते हैं। गंगाराम ने सत्य कहा, अतः उसे कोई विशेष दण्ड न दिया गया। भूल सबसे हो सकती है, उससे भी हुई।

घटना संख्या 3 : लाला गंगाराम जी की बदली किला अबदुल्लापुर (बिलोचिस्तान) में हो गई। वहां से फलों के टोकरे बाहर भेजे जाते थे। दस्तूरी का चलन वहां भी था। फलों वाले जब दस्तूरी देते थे तो ये लेते नहीं थे। प्रथम तो उनको सन्देह हुआ कि यह अधिक लेना चाहते हैं परन्तु जब इन्होंने कहा कि मुझे रेलवे से वेतन मिलता है। उसी वेतन से मुझे यह काम करना होता है। आप जिसे दस्तूरी कहते हैं, वह रिश्वत है। तब वे चुप हो गये।

एक समय स्वर्गीय पण्डित विश्वम्भरनाथ आदि वहां गये तथा इनके पास ठहरे। एक दिन वे एक ग्राम में फल खाने चले गये। बागवान से फल लेकर खाते रहे। उस बिलोच ने इनसे पूछा कि आप यहां कैसे आये हैं? इन्होंने उत्तर दिया–लाला गंगाराम जी स्टेशन मास्टर के पास आये हुए हैं। जब फलों से पेट भरकर यह उसे फलों का दाम देने लगे तो उसने दाम लेने से इन्कार कर दिया और बलपूर्वक कहा, जब स्टेशन मास्टर दस्तूरी तक भी नहीं लेता है तो मैं उसके मित्रों से फलों का दाम लूं, यह उचित बात नहीं है। आप प्रतिदिन इस बाग से जो फल चाहें आकर खाया करें। आपसे कुछ दाम न लिया जाएगा। आप जैसे गंगाराम के मित्र हैं, वैसे ही हमारे भी मित्र हैं।

घटना संख्या 4: उसी स्टेशन पर एक बार एक अंग्रेज रेलवे अफसर आया हुआ था और वह प्रतीक्षागृह में ठहरा हुआ था। दैवयोग से उस समय एक पुरुष, एक स्त्री अर्थात् पति–पत्नी जो बिलोच थे स्टेशन पर आये और उन्होंने सैकेण्ड क्लास का टिकट लिया। जब वह प्रतीक्षा गृह में गये तो अंग्रेज ने उन्हें वहां घुसने न दिया। गंगाराम ने उस अंग्रेज से कहा कि यह प्रतीक्षागृह है और प्रथम व दूसरे दर्जे के यात्रियों के लिये है। आप इसे खाली कर दें। उसने न माना। इन्होंने पुलिस द्वारा उसका सामान बाहर रखवाकर उस दम्पती को ठहराया।

उसके पश्चात एक बार इनको सूचना मिली कि इधर डाकू आये हुए हैं, आप सावधान रहें। उस दिन किला अबदुल्लापुर में कुछ न हुआ। एक और स्टेशन को डाकुओं ने लूटा। तदन्तर गाजियों का एक नेता पकड़ा गया। जब उसे रेल में ले जा रहे थे, उसने इच्छा प्रगट की कि मैं किला अबदुल्लापुर के स्टेशन मास्टर को मिलना चाहता हूं। पुलिसवालों ने स्टेशन आने पर लालाजी को कहा, वे आ गये। वह पठान बड़ी श्रद्धा से मिला और कहा, लालाजी आप निश्चिन्त भाव से रहें। जहां आप होंगे वहां कोई गाजी या डाकू जो पठान हैं, आपको कुछ न कहेगा। उस दिन हम आपके पास अमुक स्थान पर बैठे रहे। पुलिसवालों ने पूछा, खानसाहिब, लालाजी में क्या बात है? उसने कहा यह देवता है। इन्होंने सैकण्ड क्लास टिकटवाले पठान को स्थान दिलाया। यह गरीबों के सहायक हैं। इसलिये हमने निश्चय कर लिया है कि जहां ये होंगे इनकी रक्षा की जाएगी। सब पठान इनके दोस्त हैं।

घटना संख्या 5 (क) जब वे पठानकोट स्टेशन पर थे, उस समय आर्यसमाज–मन्दिर बनवाया। उस स्थान के जो थानेदार थे, वे बिना टिकट रेल पर आये। लालाजी ने उनसे टिकट के पैसे प्राप्त किये जब कि वे जानते थे कि यह थानेदार है।

(ख) एक बार एक रेलवे–अफसर अंग्रेज आया। उसके पास एक कुत्ता था। गंगाराम जी ने पूछा कुत्ते का पास या टिकट दो। उसने कहा मैं रेलवे में ही काम करता हूं। लालाजी ने कहा–मैं जानता हूं कि आपके पास, पास है, किन्तु मैं कुत्ते का किराया मांगता हूं। आपका नहीं। अन्त में उसे कुत्ते का किराया देना ही पड़ा। **पहले**

थानेदार ने शिकायत कर दी कि यह आर्यसमाजी है। लाला लाजपतराय जी का साथी है। इन सब कारणों से वह बिलोचिस्तान बदल दिये गये।

(ग) किला अबदुल्लापुर में एक बार सीनियर सुपरिण्टेण्डण्ट की धर्मपत्नी अपनी सहेलियों सहित आ गई। इन्होंने निकट मांगा। उसने कहा जाते समय दे जाऊंगी। वह सायंकाल बिना टिकट दिये चली गई। इन्होंने रिपोर्ट कर दी। उस समय श्री ज्ञानचन्द मेहता, श्री गणेशदास जी विज वहां पुलिस में थे। इन्होंने गंगाराम से कहा, आपको बदलकर यहां भेजा। यहां भी आप वैसे ही काम करते हैं। इन्होंने उत्तर दिया–आप लिखकर दिला दें कि इनसे टिकट न लिया जाये, मैं न मानूंगा। यह धन मेरी जेब में तो जाता नहीं। रेलवे कोष में जाता है।

(घ) इनके एक परिचित अंग्रेज ने (जो किसी काम पर आगे जा रहा था) इनको समाचार–पत्र चिन्हित करके दिया जहां आर्यसमाज के विरुद्ध लेख था। इन्होंने उसे पढ़ा और जब वह लौटकर आया तो अंग्रेज को आर्य–पत्रिका के कुछ अंक चिन्ह लगाकर दिये जो आर्यसमाज की सत्यता प्रकट करते थे। इनको पढ़कर वह लालाजी का भक्त बन गया। इनके असली रूप को समझ गया।

(ङ) एक स्पेशल ट्रेन में रेलवे–अफसर उधर गये। जब किला अबदुल्ला ट्रेन ठहरी तो एजेण्ट साहिब ने पूछा, गंगाराम क्या हाल है? इन्होंने उत्तर दिया ठीक है। उसने कहा, कहां जाना चाहते हो? इन्होंने कहा कि कंधार में लाइन बना दो, वहां जाऊंगा। उसने कहा हम तुम्हें पंजाब भेजना चाहते हैं। **गंगाराम जी बोले कि आर्यसमाजी होने से मुझे पंजाब से यहां भेजा था। अब तो मैं पहले से भी अधिक आर्यसमाजी हूं।** पर आप सोच लें, उसने कहा–Yes, we want an Aryasamajist for that place. हां, हम उस स्थान के लिए आर्यसमाजी ही चाहते हैं। तब वह अमृतसर स्टेशन पर बदल दिये गये। इनके काम से प्रसन्न होकर अमृतसर का माल उतारने और चढ़ाने का ठेका भी इनको ही दिया गया था।

घटना संख्या 6 : एक बार लाहौर के आर्यसमाजी जिनमें इनके सुपुत्र लाला फकीरचन्द जी, स्वर्गीय पं. भूमानन्दजी, पं. परमानन्दजी आदि अनेक सज्जन थे, ये सब गुरुकुल कांगड़ी जा रहे थे। अमृतसर स्टेशन पर एक अंग्रेज रेल अफसर उस डिब्बे में और आदमी बिठाने लगा। वहां प्रथम ही भीड़ थी। भूमानन्द जी ने विरोध किया। उसने भूमानन्द जी को उतार लिया। लालाजी को सूचना दी गई, वह आ गये। यह गाड़ी तो चली गई, इन्होंने भूमानन्दजी की जमानत करवाकर फ्रंटियर मेल से उसे भेज दिया। वह सहारनपुर अपने साथियों को जा मिले। दोनों पक्षों ने अभियोग किया। **जिस समय उस अफसर को पता लगा कि इस अभियोग में लाला गंगारामजी साक्षी होंगे तो वह इनके पास आया और बोला कि मेरी उनसे सन्धि करवा दें क्योंकि अमृतसर में सब आपको सत्यवक्ता जानते हैं। आपकी साक्षी से यह दोषी सिद्ध न होकर मैं ही दोषी बनूंगा। गंगाराम जी ने दोनों मे सन्धि करवा दी।**

देशवासियों को स्वर्गीय लाला गंगाराम जी के जीवन की घटनाएं पढ़कर उन पर विचार करना चाहिए। जैसे वे थे, वैसे ही दृढ़ आर्य और सत्यवक्ता तथा कर्तव्य–पालक बनने का यत्न करना चाहिये।

देश हित के कार्यों से रहित कोरा आध्यात्मिक जीवन उचित नहीं

—मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य इस जड़—चेतन संसार में जन्म लेता व मृत्यु को प्राप्त होता है। उसे यह पता नहीं होता कि उसका जन्म क्यों हुआ व उसे क्या करना है? उसे यह भी पता नहीं होता कि जन्म से पूर्व वह था या नहीं और यदि था तो वह कहां था? मरने पर उसकी आत्मा वा चेतन सत्ता का अस्तित्व बना रहेगा या नहीं, इस बारे में न वह जानता है और न जानने की कोशिश ही करता है। उसको जन्म देने वाले माता व पिता के साथ भी यही बात होती है। वह भी इन प्रश्नों के उत्तर नहीं जानते। जो व्यक्ति जिस मत व सम्प्रदाय में जन्म लेता है, उसे उस मत के ही संस्कार व शिक्षायें मिलती हैं। **संसार में प्रचलित सब मतों की शिक्षाओं में समानता नहीं है। यदि समानता होती तो फिर किसी प्रकार की कोई समस्या नहीं होती। अतः सभी मनुष्यों को विचार कर अपने जीवन के उद्देश्य एवं उनकी पूर्ति के साधनों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।** इसके लिये स्वाध्याय का आश्रय लिया जा सकता है। स्वाध्याय में सभी प्रकार की पुस्तकों से समस्या हल होने के स्थान पर उलझनें हो सकती हैं। सभी मत—पन्थों व विद्वानों की पुस्तकों में भी मत—मतान्तरों के अनुरूप अविद्यायुक्त एवं भ्रमयुक्त बातें हैं। अतः सत्य व यथार्थ विद्या वा ज्ञान के ग्रन्थों का स्वाध्याय करना ही उचित होता है।

ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि विषयक सत्य ज्ञान को जानने के लिये हमारे अनेक पूर्वजों ने प्रयत्न किये और उनके ज्ञान व अनुभव हमें उपनिषद, दर्शन आदि पुस्तकों में भी प्राप्त हैं। हमें उन ग्रन्थों को पढ़कर उनकी परीक्षा करनी चाहिये और सत्य को स्वीकार तथा असत्य का त्याग करना चाहिये। यही बात ऋषि दयानन्द जी ने भी अपने ग्रन्थों में कही है। अपने ज्ञान व अनुभव के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि संसार के सभी मतों व ग्रन्थों में सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन वा स्वाध्याय सबसे अधिक लाभदायक एवं मनुष्य जीवन के उद्देश्य से परिचित कराने वाला है। इस ग्रन्थ से मनुष्य जीवन के उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति के साधनों का मार्गदर्शन भी होता है। जो व्यक्ति निष्पक्ष होकर इस ग्रन्थ का अध्ययन करता है वह सत्य को जानकर व सत्य मार्ग को अपना कर जीवन के उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त होता है। मोक्ष प्राप्ति पर ही मनुष्य सभी प्रकार के दुःखों से छूटता है। मोक्ष में लम्बी अवधि के लिये जन्म व मृत्यु पर रोक लग जाती है। जीवात्मा ईश्वर के सान्निध्य में रहकर उसके आनन्द को भोगता है। सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में ऋषि दयानन्द ने मोक्ष विषय को विस्तार से समझाया है। मोक्ष का ज्ञान केवल अन्ध विश्वास व मिथ्या आस्था का विषय नहीं है अपितु यह अध्ययन, तर्क, युक्ति व आप्त प्रमाणों से भी सत्य सिद्ध है। सांख्य, योग एवं वेदान्त दर्शन का अध्ययन कर भी इस विषय में लाभ होता है। इसे पढ़ने के बाद सभी मतों के साहित्य को पढ़ा जा सकता है और सत्य और असत्य का निर्णय किया जा सकता है। हमारा देश सौभाग्यशाली है जहां ईश्वर का वेदज्ञान सुलभ है और इसके साथ यहां सत्य विद्या के अनेक सत्शास्त्र उपनिषद, दर्शन, विशुद्ध मनुस्मृति सहित ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि एवं आर्याभिविनय आदि भी उपलब्ध हैं। हम यह समझते हैं कि जो व्यक्ति मनुष्य जीवन लेकर इन ग्रन्थों का अध्ययन व मनन नहीं करता वह अभागा मनुष्य है। शायद इस कारण से परमात्मा उसे अगले जन्म में मनुष्य न बनाये।

सत्यार्थप्रकाश एवं वैदिक साहित्य से दूर मनुष्य सत्य को प्राप्त होकर मनुष्य जीवन के लक्ष्य व उद्देश्यों को कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। अतः हमें वैदिक साहित्य का अध्ययन कर उसकी सत्यता की परीक्षा अवश्य करनी चाहिये और सत्य को जानकर उससे लाभ उठाना चाहिये।

कोरा भौतिक जीवन जिस प्रकार से समाज व देश के लिये उपयोगी नहीं होता है उसी प्रकार से कोरा आध्यात्मिक जीवन भी मानवजाति के लिये पूर्णतः लाभप्रद नहीं होता। आध्यात्मिक जीवन से स्वकल्याण निश्चित रूप से होता है। ऐसे मनुष्य को स्वजीवन का कल्याण करते हुए समाज व देश के कल्याण की भावना रखनी चाहिये और उसकी चिन्ता भी करनी चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह देश व समाज की उपेक्षा का आरोपी होता है। हमने ऐसे बहुत से लोग देखे हैं जो आध्यात्मिक जीवन और अपने निजी आत्मकल्याण को ही महत्व देते और सामाजिक उन्नति तथा संगठन की उपेक्षा करते हैं। ऐसा करने से उस व्यक्ति का अपना समाज व परिवार वर्तमान व भविष्य में खतरों में पड़ सकता है। ऐसा ही अतीत में हमारे देश में हुआ है और इसके दुष्परिणाम वर्तमान पीढ़ियों को भोगने पड़ रहे हैं। यदि पांच हजार वर्ष पूर्व महाभारत युद्ध के बाद हमारे पूर्वज ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य देश व समाज के प्रति अपने परिवार वा वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना रखते हुए व्यक्ति–व्यक्ति के कल्याण से स्वयं को जोड़कर रखते तो आज जो समस्यायें व चुनौतियां विधर्मियों, अपने सत्तालोलुप नेताओं और भ्रमित देशवासियों से मिल रही हैं वह न मिलती। यदि देश में अन्धविश्वासों से रहित सत्य सिद्धान्तों पर आधारित सामाजिक न्याय की परम्परायें होती तो फिर आज विश्व में केवल वैदिक मत का ही अस्तित्व होता। आज जो अवैदिक मत प्रचलित हैं और इनके द्वारा अविद्या, अज्ञान, अन्धविश्वासों और मिथ्या परम्पराओं का जो पोषण होता है, वह न होता। आज समाज में जो समस्यायें हैं उसका कारण हमारे पूर्वजों का वेदविपरीत व्यवहार सहित सत्कर्मों एवं संगठन की उपेक्षा प्रमुख रूप से दिखाई देती है। यदि आज भी हम जाति के सुधार के कार्यों में सक्रिय हों तथा राम व कृष्ण को मानने वाले सभी लोग सुसंगठित हो जायें तो हमारा देश व समाज बच सकता है। ऐसा नहीं करेंगे तो वैदिक धर्म के विरोधी विधर्मी हमारे भाईयों व हमें छल, बल, लोभ व अन्य सभी उचित व अनुचित तरीकों से अपने स्वमत–पन्थ आदि में प्रविष्ट कर हमें परम गौरवयुक्त वेद से वंचित कर देंगे। इसके लिये हमें महाभारत काल के बाद का सत्य इतिहास अवश्य पढ़ना चाहिये। ऐसा करने से हमारा मार्गदर्शन होगा और हम वर्तमान की चुनौतियों से भी परिचित हो सकेंगे तथा उसका निदान हो सकेगा।

मनुष्य की आत्मा गुणग्राहक है एवं कर्म करने में समर्थ होती है। मनुष्य को अपनी आत्मा को सभी प्रकार के गुणों को धारण कराने के साथ उन सभी गुणों का उपयोग अपनी आत्मा की उन्नति सहित देश व समाज के कल्याण के लिये करना चाहिये। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय में मनुष्यों को विद्या एवं कर्म दोनों को यथार्थ रूप में समझकर पुरुषार्थ से युक्त वेदानुकूल कर्मों को करके मृत्यु पर विजय प्राप्त करने तथा विद्या से अमृत को प्राप्त करने का सन्देश दिया गया है। यदि विद्या एवं कर्म दोनों का समन्वय जीवन में नहीं होगा तो जीवन अधूरा ही कहा जायेगा। बिना सद्कर्मों वा वेदाचरण के मनुष्य मृत्यु के पार नहीं जा सकता। सद्कर्मों में देशभक्ति, मानवमात्र के प्रति प्रेम एवं उनकी जन–जन की सेवा आदि कार्य सम्मिलित हैं। महर्षि दयानन्द का जीवन हमारे लिये आदर्श जीवन है। इससे अधिक महान आत्मा ने विगत पांच हजार वर्षों में देश में जन्म नहीं लिया। ऋषि दयानन्द के जीवन में ज्ञान व कर्म का अद्भुद

समन्वय था। उन्होंने मानव जाति को वेद का अध्ययन करने तथा उसके महत्व को जानकर उसकी शिक्षाओं को अपने जीवन में धारण करने का सन्देश दिया है। इस कार्य को करके ही मनुष्यता बच सकती है। मनुष्यता को सबसे बड़ा खतरा वेदाचरण न करने वालों से है। यह अपनी भ्रान्तियों व अज्ञानता से मानव के अहित का कितना भी निष्कृष्ट कार्य कर सकते हैं। अतः वैदिक धर्मियों का यह दायित्व है कि वह अपने ज्ञान व योग्यता के अनुरूप वेद प्रचार करें और सूर्य के समान न सही परन्तु एक दीपक के अनुरूप ही थोड़ा सा अन्धकार वा अज्ञान दूर कर ज्ञान का प्रकाश करें। यह सम्भव है कि उनका यही छोटा सा कार्य भविष्य में विश्व में ज्ञान से पूर्ण वेद–क्रान्ति ला सकेगा।

जो व्यक्ति सामाजिक व राजनीतिक जीवन व कार्यों की उपेक्षा कर केवल अपनी आध्यात्मिक उन्नति में ही लगे रहते हैं उनका जीवन अधूरा जीवन होता है। ऐसे जीवन से समाज व देश को लाभ नहीं होता। हम विचार करें तो पाते हैं कि देश व समाज के हमारे ऊपर अनेकानेक ऋण हैं जिन्हें हमें उतारना चाहिये। इसके लिये हमें सेवा भावना सहित सामाजिक व राजनीतिक जीवन व्यतीत करना चाहिये। इसके साथ ही आध्यात्मिक ईश्वर व आत्मा को प्रत्यक्ष करने की साधना वा उपासना को करके अपनी आत्मा को उन्नत करना चाहिये। इससे आत्मा के कल्याण सहित देश व समाज के लोगों को भी लाभ होगा और इससे हम देश व समाज के ऋण से भी उऋण हो सकेंगे। ओ३म् शम्।

फार्म–4

प्रकाशन	:	पवमान
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
मुद्रक का नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
जिस स्थान पर मुद्रक का काम होता है उसका सही तथा ठीक विवरण	:	सरस्वती प्रेस, 2–ग्रीन पार्क, देहरादून
प्रकाशक का नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
क्या भारत का नागरिक है?	:	हाँ
प्रकाशक का पता	:	वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून
सम्पादक का नाम	:	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
क्या भारत का नागरिक है?	:	हाँ
सम्पादक का पता	:	166 ओल्ड नेहरू कॉलोनी, इलाहाबाद बैंक के पास देहरादून (उत्तराखण्ड)
उन व्यक्तियों के नाम, पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत के हिस्सेदार हों।	:	वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून

मैं कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
सम्पादक

दिनांक : 15–02–2020

दिनाँक 23—12—2019 को दिवंगत शीर्ष वैदिक विद्वान को श्रद्धांजलि

महान वेदज्ञ पं. सत्यानन्द वेदवागीश जी का महाप्रयाण

—डॉ. जयदत्त उप्रेती शास्त्री

आर्यजगत के महान् वेदज्ञ विद्वान् पं. सत्यानन्द वेदवागीश का निधन—समाचार अतीव दुःखद है। वे 87 वर्ष के थे। वे श्री गुरुकुल, चित्तौड़— गढ़ के स्नातक और स्वामी व्रतानन्द के सुयोग्य प्रिय शिष्य थे। सांगोपांग वेदों के उच्च कोटि के विद्वान थे। ऋषि दयानन्द के परम भक्त और आर्यसमाज के उज्जवल रत्न थे। सरल, प्रसन्नचित, निश्छल स्वभाव के उदार पुरुष थे। वे मेरे सुपरिचित मित्र थे और हम दोनों में परस्पर अनेक विषयों में वार्तालाप होता रहता था। हल्द्वानी, नैनीताल के आर्यसमाजों के उत्सवों पर उनके श्रीमुख से व्याख्यान सुनने का सौभाग्य रहा। उन्होंने अपनी लिखी अनेक छोटी बड़ी पुस्तकें मुझे भेंट की थी और अपनी कुछ रचनायें उन्हें मैंने भी सादर भेंट की थीं। अन्तिम दिनों में वे महर्षि दयानन्द स्मृति भवन, जोधपुर में रह रहे थे। ऐसे वेदशास्त्रों के श्रेष्ठ विद्वान् के चले जाने से आर्य समाज की अपूरणीय क्षति हुई है। दिवंगत आत्मा को विनम्र श्रद्धांजलि है। ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे और परिवारजनों को इस वियोगजन्य दुःख के लिए सान्त्वना प्रदान करे।

पं. सत्यानन्द जी की अनेक रचनाओं की सूची इस प्रकार हैः—

1— दयानन्द वेदभाष्य भावार्थप्रकाशः (पूर्वखण्डः, पृष्ठ 1090)

2— दयानन्द वेदभाष्य भावार्थप्रकाशः (उत्तरखण्डः, पृ. 808)

3— अष्टाध्यायीप्रयोगदीपिकावृत्तिः, पृष्ठ 700

4— धातुपाठ प्रयोगदीपिकावृत्तिः,पृ. 824

5— उणादि—लिंगानुशासन, गणपाठ—प्रयोगदीपिकावृत्तिः, पृ. 600

6— पाणिनीयशब्दानुशासनम् (पंचपाठी सपरिशिष्ट), पृ. 324

7— दयानन्द दृष्टान्तनिधिः, पृ. 150

8— पाणिनीय—त्रिपाठी सोदाहरण, पृ. 164

9— दयानन्द—प्रश्नोत्तर—संवादनिधिः

10—नामनिधिः,पृ. 330

11—बुद्धिनिधिः, पृ. 354

12—वेदसाहाय्यनिधिः, पृ. 338

13—सूक्तिनिधिः, पृ. 206

14—विद्यार्थियों के लिये अनिवार्य शिक्षा

15—क्या महाभारत युद्ध रोका नहीं जा सकता था?, पृ. 314

16—भक्ति—संत्संग—कीर्तन, पृ. 104

17—धीप्रेरकः सुमतिदाता मेधयागः।

इन पुस्तकों में जो कुछ मौलिक और कुछ सम्पादित है, वेद—संस्कृत प्रेमी जनों के लिए और पुस्तकालयों के लिए बहुत उपयोगी है, जिनसे लाभ लिया जाना चाहिए।

ये रचनायें श्री सत्यानन्द जी की बहुशास्त्रज्ञता की द्योतक तो हैं ही, आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शन और प्रेरणास्रोत भी हैं।

श्रद्धांजलि

आर्यजगत के शीर्ष वैदिक विद्वान आचार्य पं. सत्यानन्द वेदवागीश जी का 23 दिसम्बर, 2019 को 86 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। उनकी मृत्यु आर्यजगत की भारी क्षति है। वैदिक साधन आश्रम तपोवन आचार्य पं. सत्यानन्द वेदवागीश जी की मृत्यु पर दुःख व्यक्त करता है और उनको अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह पंडित जी की आत्मा को सद्गति करें।

–आर्यसमाज के महाधन–

पं. रामचन्द्र देहलवी का आर्यसमाज में गौरवपूर्ण योगदान

–मनमोहन कुमार आर्य

पं. रामचन्द्र देहलवी जी का आर्यसमाज के इतिहास में गौरवपूर्ण योगदान है। उन्होंने वैदिक धर्म और इसके सिद्धान्तों सहित इस्लाम और ईसाई मत के ग्रन्थों पर भी एक अधिकारी विद्वान के रूप में स्थान प्राप्त किया था और इनकी समीक्षा बहुत प्रभावशाली एवं तथ्यपूर्ण रीति से करते थे। इसका महत्व इस कारण से था कि उनको इन मतों के दोनों पक्षों सत्य व असत्य का भलीभांति ज्ञान था। कोई पादरी व मौलवी उनको भ्रमित नहीं कर सकता था। वह इन मतों की मान्यताओं पर विपक्षी विद्वानों से शास्त्रार्थ भी करते थे। इन मतों की मान्यताओं पर उनके प्रवचन देश भर की आर्यसमाजों में हुआ करते थे। उनकी इस योग्यता और उनके लिखे ग्रन्थों ने उन्हें आर्यसमाज का एक उच्च योग्यता का महनीय व विश्वसनीय विद्वान सिद्ध किया था। आर्यसमाज की इन मतों पर जो मान्यतायें थी उसकी पं. रामचन्द्र देहलवी जी प्रमाणों, युक्ति व तर्कों से पुष्टि किया करते थे। ऐसे विद्वानों का आर्यसमाज में होना आर्यसमाज के लिये सौभाग्य एवं गौरव की बात थी। उनके चले जाने से वस्तुतः आर्यसमाज की व धार्मिक जगत के उन लोगों की भारी क्षति हुई थी जो सत्य को महत्व देते हैं, सत्य का अन्वेषण करते हैं, सत्य के लिये संघर्ष करते और सत्य का अपने देश व समाज में प्रचार प्रसार होता देखना चाहते हैं। पं. जी का जन्म दिनांक 8–4–1881 तदनुसार चैत्र शुक्ल नवमी सम्वत् 1938 विक्रमी को मध्य प्रदेश के नीमच स्थान पर पिता मुन्शी छोटेलाल तथा माता श्रीमती रामदेई जी के यहां रामनवमी पर्व पर हुआ था। रामनवमी के दिन जन्म लेने के कारण आपका नाम रामचन्द्र रखा गया था। बचपन से ही आपकी बुद्धि कुशाग्र थी। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मध्य प्रदेश के नीमच के एक विद्यालय में हुई। आपने मिडिल अर्थात् आठवीं की परीक्षा डी.ए.वी. स्कूल अजमेर से उत्तीर्ण की थी।

इसके बाद आप इन्दौर में जाकर पढ़े और यहां मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। आपने विद्यालीय शिक्षा मैट्रिक तक ही प्राप्त की थी। 18 वर्ष की आयु में दिल्ली निवासी कमला देवी जी से आपका विवाह हुआ। अब अपनी पत्नी व परिवार के जीवन निर्वाह का भार आप पर आ पड़ा था।

विवाह के बाद आप दिल्ली आ गये। यहां आपके श्वसुर की सुनार की दुकान थी। यह इनका पारिवारिक व्यवसाय था। दिल्ली में देहलवी जी ने रैली ब्रदर्स नामक एक अंग्रेजी फर्म में 15 रुपये मासिक वेतन पर कार्य किया। यह भी बता दें कि सन् 1899 में मैट्रिक पास होना महत्वपूर्ण माना जाता था। हमने सन् 1974 में अपना व्यवसायिक जीवन आरम्भ किया था। उन दिनों भारत सरकार में मैट्रिक पास योग्यता वालों को एल.डी.सी. का पद दिया जाता था। हमारा अनुमान है कि सन् 1899 में मैट्रिक पास युवक बहुत कम होते थे और इन्हें आसानी से नौकरी मिल जाया करती होगी। रैली ब्रदर्स, दिल्ली में कार्य करते हुए एक बार आपको अवकाश पर रहना पड़ा। लौटने पर मालिक ने कारण पूछा तो आपने उसे कारण बताया। फर्म के स्वामी ईसाई थे। उन्हें अवकाश लेने पर आपत्ति थी। अतः आपने उसे दो टूक उत्तर दिया कि ईसाई मत के ग्रन्थ बाइबिल के अनुसार ईश्वर ने सृष्टि बनाने

के बाद सातवें दिन रविवार को आराम किया था। यह एक प्रकार की छुट्टी व अवकाश ही तो था। इस कहा–सुनी के कारण आपको नौकरी का त्याग करना पड़ा और आपने अपने श्वसुर की दुकान पर स्वर्णकारी का काम करना आरम्भ कर दिया। इस कार्य को करते हुए आपको कार्य में सफलता के साथ लोकप्रियता भी प्राप्त हुई। जब सन् 1917 में आपकी आयु 36 वर्ष थी तब आपकी धर्मपत्नी कमलादेवी जी का निधन हो गया। आपका स्वास्थ्य एवं व्यक्तित्व प्रभावशाली था। आपको विवाह के अनेक प्रस्ताव प्राप्त हुए परन्तु आप दूसरे विवाह के लिये सहमत नहीं हुए। आपने अपनी पत्नी के निधन के समय उसके शव के सम्मुख यह संकल्प लिया था कि जिस दृष्टि से मैंने तुम्हें अर्थात् कमलादेवी जी को देखा है उस दृष्टि से अब किसी नारी को नहीं देखूंगा। पत्नी की मृत्यु के बाद आपने अपना अधिकांश समय आर्यसमाज के वैदिक साहित्य के अध्ययन व प्रचार कार्यों में व्यतीत किया।

इन्हीं दिनों ईसाई व मुस्लिम मत के विद्वान दिल्ली के फव्वारा चौक पर सप्ताह में दो दिन अपने–अपने मत का प्रचार किया करते थे। इस प्रचार में वैदिक धर्म किंवा सनातन पौराणिक मत की आलोचना रहा करती थी और स्वमतों का गुणगान हुआ करता था। पं. रामचन्द्र देहलवी जी एक श्रोता के रूप में इन व्याख्यानों को सुनते थे। इनमें वैदिक धर्म की आलोचना को सुनकर उनको ग्लानि व क्षोभ होता था। इस मनोस्थिति ने उन्हें इन मतों के धार्मिक साहित्य का अध्ययन करने और उनकी मिथ्या आलोचनाओं का प्रतिवाद करने की प्रेरणा की। उन्होंने अपने अध्ययन को इन मतों के साहित्य पर केन्द्रित किया। एक अच्छे प्रभावशाली वक्ता की तैयारी कर आप मैदान में उतरे और उसी स्थान पर नियमित अर्थात् प्रतिदिन उन्होंने वैदिक धर्म के मण्डन तथा ईसाई व मुस्लिम विद्वानों की आलोचनाओं का उत्तर व खण्डन करना आरम्भ कर दिया। पं. रामचन्द्र देहलवी जी के व्याख्यानों से पादरियों एवं मौलवियों की मजलिस उखड़ने लगी। देहलवी जी के व्याख्यान सुनने वालों की संख्या भी अधिक होने लगी जिससे फव्वारा चौक पर यातायात में बाधा आने लगी। इस कारण पुलिस के अधिकारियों ने पंडित जी के व्याख्यानों के लिये निकटवर्ती गांधी ग्राउण्ड स्थान को निर्धारित किया। आर्यसमाज के विद्वानों ने लिखा है कि सन् 1910 से सन् 1924 तक के लगभग 14 वर्षों तक देहलवी जी ने इसी स्थान पर बिना किसी व्यवधान अर्थात् नियमित रूप से व्याख्यान दिये। ऐसा उदाहरण हमारे किसी अन्य विद्वान के जीवन में देखने को नहीं मिलता। लगातार 14 वर्ष तक व्याख्यान देना अपने आप में एक रिकार्ड है। यह योग्यता व उपलब्धि आर्यसमाज के शायद किसी विद्वान के जीवन में प्राप्त नहीं हुई। इसी अवधि में आपकी पत्नी एवं एक पुत्र का निधन हुआ परन्तु उससे कोई बाधा आपके व्याख्यानों के क्रम में नहीं आई।

पं. देहलवी जी ने एक अपंग हाफिज जी को अपना गुरु बनाया था और उनसे विधिवत कुरान का अध्ययन किया था। कुरान सहित ईसाई मत की पुस्तकों का गहन ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद ही पण्डित जी पादरियों तथा मौलवियों से शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त हुए थे। उन्हें सभी शास्त्रार्थों में सफलता व विजय प्राप्त हुई थी। देहलवी जी ने जो शास्त्रार्थ किये वह संख्या की दृष्टि से बहुत अधिक हैं और इसके साथ ही वह रोचक, शिक्षाप्रद एवं ज्ञानवर्धक भी हैं। देहलवी जी वैदिक आर्य विद्वान थे और पूरे आर्यजगत सहित सभी मतों के धार्मिक विद्वानों में उनकी योग्यता का डंका बजता था। उच्च कोटि के विद्वान, ईश्वर और वेद को समर्पित, ऋषि दयानन्द के आदर्श भक्त एवं वेद प्रचार के लिये मनसा–वाचा–कर्मणा समर्पित

देहलवी जी को पूरे देश की आर्यसमाजों में उपदेश व व्याख्यानों के लिये वेद प्रचारार्थ आमंत्रित किया जाता था। यह उनकी योग्यता का समुचित उपयोग भी था। हैदराबाद मुस्लिम रियासत की प्रजा हिन्दू बहुसंख्यक थी। वहां आर्यसमाज का अच्छा प्रभाव था। वहां वैदिक धर्म के प्रचार व व्याख्यानों से चहुं ओर धर्म विषयक जागृति एवं हलचल उत्पन्न हुई। हैदराबाद रियासत के निजाम ने पण्डित जी के प्रमाणों व सत्य मान्यताओं से युक्त व्याख्यानों से डर कर उनके रियासत में व्याख्यान देने पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। यहां तक की उनको रियासत से निष्कासित भी किया था। 2 फरवरी सन् 1968 को 87 वर्ष की आयु में उनका दिल्ली में निधन हुआ था।

पं. रामचन्द्र देहलवी जी ने आर्यसमाज के साहित्यिक भण्डार में अपनी ज्ञान प्रसूता लेखनी से महत्वपूर्ण योगदान किया वा उसमें वृद्धि की। उनकी प्रसिद्ध पुस्तकों के नाम हैं 1— दो सनातन सत्तायें, 2— सत्यार्थप्रकाश के चतुर्दश समुल्लास में उद्धृत कुर्आन की आयतों का देवनागरी में उल्था और अनुवाद (सन् 1945), 3— ईश्वर सिद्धि, 4— ईश्वरोपासना, 5— धर्म और अधर्म, 6— ईश्वर में अविश्वास क्यों?, 7— विद्यार्थी और सदाचार, 8— ईश्वर की पूजा का वैदिक स्वरूप, 9— इंजील के परस्पर विरोधी वचन, 10— पौराणिकों से शास्त्रार्थ का विषय निश्चित करते समय ध्यान में रखने योग्य बातें, 11— कुर्आन में अन्य मतावलम्बियों के लिये कुछ अति कठोर, उत्तेजक वाक्यों का संग्रह (1944), 12— आर्यसमाज की मान्यतायें, 13— आर्यसमाज के मन्तव्य, 14— कुरान का अनुवाद (सूर ए बकर और सूर ए फातिहा), 15— रामचन्द्र देहलवी लेखावली (1968), 16— ईश्वर ने दुनिया क्यों बनाई?, 17— पूजा क्या, क्यों और कैसे?तथा 18— वेद का इस्लाम पर प्रभाव। आर्य विद्वान डॉ० विवेक आर्य ने बताया है कि ''पंडित रामचन्द्र देहलवी लेखावली'' का प्रकाशन शीघ्र हो रहा है।

आर्यजगत के प्रसिद्ध विद्वान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने ''प. रामचन्द्र देहलवी व उनका वैदिक दर्शन'' एक 367 पृष्ठीय ग्रन्थ की रचना की है। इसका प्रकाशन सन् 2008 में आर्य प्रकाशक 'विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली' से हुआ था। इस ग्रन्थ में पंडित जी के कुछ ग्रन्थों 'दो सनातन सत्तायें', 'कुर्आन में अति कठोर वाक्य', 'ईश्वर की सत्ता' आदि का समावेश भी है। इसके साथ ही इस पुस्तक में अनेक महत्वपूर्ण अध्याय हैं। कुछ महत्वपूर्ण अध्याय 1—पण्डित जी के अभियोग के समय, 2— देहलवी जी के शास्त्रार्थों की कुछ झांकियां, 3— स्वराज्य संग्राम में पण्डित जी, 4— पण्डित जी की तार्किकता व फुलझड़ियां, 5— देहलवी जी के चिन्तन का निचोड़, 6— लोक—सेवा और ईश्वर सेवा और 7— पण्डित जी के व्याख्यान आदि हैं। इस ग्रन्थ के लिये प्रा. जिज्ञासु जी और प्रकाशक श्री अजय आर्य जी आर्यजगत की ओर से धन्यवाद एवं बधाई के पात्र हैं। लगभग 20 वर्ष पूर्व साप्ताहिक पत्र 'आर्य—सन्देश' ने पं. रामचन्द्र देहलवी जी पर एक भव्य विशेषांक निकाला था। उन दिनों इस पत्र के सम्पादक भी मूलचन्द गुप्त जी हुआ करते थे।

प्रा. जिज्ञासु जी ने अपनी उपर्युक्त पुस्तक में पं. रामचन्द्र देहलवी जी पर हिन्दी साहित्य तथा देश के जाने माने साहित्यकार, पत्रकार, इतिहास लेखक, प्राध्यापक, आयुर्वेदाचार्य प्रो. चतुरसेन शास्त्री जी का एक पुराना संक्षिप्त लेख दिया है। इसकी महत्ता के कारण हम उसे यहां साभार उद्धृत कर रहे हैं। वह लिखते हैं ''आप (पं. रामचन्द्र देहलवी जी) नीमच मध्य प्रदेश के निवासी हैं पर कोई 20 साल से दिल्ली में रहते हैं। पहले आप रैली ब्रादर फर्म में क्लर्क थे, पीछे आपने नौकरी से

घृणा करके उसे छोड़ दिया और (सोने की) घड़ाई का काम करने लगे। आप उत्कृष्ट आर्यसमाजी हैं, धीरे–धीरे आपने आर्य सिद्धान्तों का प्रचार शुरु किया। वाणी में रस और मस्तिष्क में प्रतिभा थी। आप चमके और खूब चमके। आज आर्यसमाज में आपकी टक्कर का कोई योद्धा नहीं है।

कुर्आन आपके कण्ठ पर है। बड़े बड़े हाफिज मौलवी आपके मधुर कुर्आन पाठ पर लट्टू हैं। आप प्रबल तार्किक और सभाजीत व्यक्ति हैं। आर्य संसार में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा है। आपकी वचनशैली नुक्तेदार, प्रसाद गुणयुक्त और नुकीली है। चुभती है मगर दर्द नहीं करती। लोग हंस पड़ते हैं मगर आंखों में आंसू आ जाते हैं।

आपकी तीन पुत्रियां हैं। पुत्र एक भी नहीं। आपकी धर्म पत्नी का स्वर्गवास 8/7 वर्ष हुए हो गया। आपने फिर विवाह नहीं किया। अभी आपकी अवस्था अनुमानतः 40 वर्ष की होगी। आप अखिल भारतवर्षीय मेढ क्षत्रिय सम्मेलन इन्दौर के सभापति रह चुके हैं।

अब भी आप अपने घड़ाई के काम की मजूरी करके पेट भरते हैं। बड़े–बड़े मौलवी पण्डित लोग आपकी धुएं से भरी दुकान में टाट के फर्श पर बैठे रहते हैं। आपके हाथ की चिमटी काम करती जाती है और जुबान उपदेश देती रहती है। आपकी यह उच्च प्रतिभा, प्रतिष्ठित हैसियत और साधारण मजूरी का जीवन आज सैकड़ों, लाखों, करोड़ों पढ़े पत्थर बाबुओं के लिये देखने और समझने की वस्तु है।''

पंडित जी के विषय में हमने विद्वानों से एक संस्मरण सुना था। दिल्ली के चांदनी चौक पर एक मौलवी जी का व्याख्यान हो रहा था। वहां बहुत बड़ी भीड़ व्याख्यान सुन रही थी। देहलवी जी भी एक श्रोता के रूप में इस व्याख्यान में उपस्थित थे। मौलवी जी कुर्आन की किसी आयत का उच्चारण करते हुए अटक गये। उन्होंने जनता से कहा कि जिसको वह आयत स्मरण हो वह उस आयत को पूरा सुनाये। सभी चुप थे। देहलवी जी ने हाथ खड़ा किया। उन्हें आयत पूरी सुनाने का अवसर दिया गया। देहलवी जी ने वह पूरी आयत शुद्ध व स्पष्ट उच्चारण करते हुए सुना दी। मौलवी जी प्रसन्न हुए और बोले कि मुसलमान अपने धर्म और पुस्तक के प्रति कितने स्वाध्यायशील व पक्के हैं इसका ज्ञान इस घटना से होता है। इस पर देहलवी जी ने मौलवी जी को कहा कि मैं कोई मुसलमान नहीं अपितु ऋषि दयानन्द के अनुयायी एक आर्यसमाजी पंडित रामचन्द्र देहलवी हूं। इससे मौलवी जी को निराशा हुई।

डा. भवानीलाल भारतीय जी ने पं. रामचन्द्र देहलवी जी का जीवन परिचय अपने ग्रन्थ 'आर्य लेखक कोश' में दिया है। उनकी 'आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी' व कुछ अन्य पुस्तकों में भी देहलवी जी का उल्लेख व विवरण मिलता हैं। लगभग 52 वर्ष पहले 2 फरवरी, 1968 को पं. रामचन्द्र देहलवी जी दिल्ली में दिवंगत हुए थे। आगामी 2 फरवरी को उनकी बावनवीं पुण्य तिथि है। इस दिन आर्यसमाजों में उनकी स्मृति में यज्ञ किये जाने चाहिएं और उनके व्यक्तित्व व कृतित्व पर व्याख्यान होने चाहिएं। लोग उनके साहित्य को पढ़कर उनसे प्रेरणा ग्रहण करें। आर्य साहित्य के प्रकाशक इस अवसर पण्डित जी के अनुपलब्ध ग्रन्थों के प्रकाशन का निर्णय लें व उसका लोकार्पण करें। यदि इस रूप में देहलवी जी की रामनवमी के दिन उनकी 139 वीं जयन्ती मनायी जाती है तो यह उनको उचित श्रद्धांजलि होगी। आर्यसमाज के प्रमुख विद्वानों को समय समय पर स्मरण न करना एक प्रकार की कृतघ्नता है। आर्यसमाज के सुधी अनुयायी अपने कर्तव्यों का उचित रीति से सम्पादन करें, यह उनसे अपेक्षा है।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन में होने वाले शिविरों, उत्सवों तथा समस्त कार्यक्रमों का विवरण

वर्ष–2020 (1 जनवरी से 31 दिसम्बर 2020 तक)

महीना	कार्यक्रम का विवरण	अवधि	विद्वान का विवरण
फरवरी एवं मार्च	योग एवं चतुर्वेद परायण यज्ञ	18 फरवरी से 8 मार्च	स्वामी चितेश्वरानन्द सरस्वती
नोट : सभी प्रतिभागी प्रातः 3 बजे उठने का अभ्यास बना लें। अपने रजिस्ट्रेशन हेतु स्वामी विशुद्धानन्द जी, मोब. 7579006599 अथवा मैनेजर तपोवन आश्रम, मोब. 7310641586 पर सम्पर्क करें।			
अप्रैल			
1.	धर्म शिक्षा की परीक्षाओं का आयोजन	12 अप्रैल	उत्तराखण्ड विद्यार्य सभा द्वारा
2.	योग प्रशिक्षण शिविर(प्रथम स्तर)	22 से 29 अप्रैल	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
मई	तपोवन आश्रम का ग्रीष्मोत्सव,	13 से 17 मई	
जून 1.	युवतियों हेतु जीवन निर्माण शिविर	30 मई से 3 जून	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
2.	युवाओं हेतु जीवन निर्माण शिविर	10 से 14 जून	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
जुलाई	वानप्रस्थियों के लिए योग शिविर	5 से 19 जुलाई	स्वामी अमृतानन्द जी
अगस्त	दर्शनों का अध्ययन	8 से 30 अगस्त	स्वामी आशुतोष जी
सितम्बर	दर्शनों का अध्ययन	15 से 30 सितम्बर	आचार्य सतेन्द्र जी
अक्टूबर	गायत्री यज्ञ	7 से 18 अक्टूबर	पंडित सूरतराम शर्मा जी
नवम्बर	1. योग प्रशिक्षण शिविर (प्रथम स्तर)	5 से 12 नवम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2. वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर	22 से 28 नवम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
दिसम्बर	1. सांख्य दर्शन सार(प्रथम भाग) शिविर	1 से 8 दिसम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2. यज्ञ प्रशिक्षण शिविर	13 से 20 दिसम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य

नोट : उपरोक्त कार्यक्रमों की तिथि एवं विद्वानों के नामों में तपोवन आश्रम सोसाइटी के द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है जिसकी सूचना पत्रिका के माध्यम से पूर्व में ही प्रकाशित कर दी जायेगी।

समाचार पत्र में प्रकाशित लेखों के अप्रमाणिक कथनों पर टिप्पणी

वेदों के महत्व और प्रचार के प्रसंग में महर्षि दयानन्द से परहेज क्यों?

—डॉ० जयदत्त उप्रेती शास्त्री

पिछले दिनों दैनिक जागरण दिनांक 15—10—2019 के अंक में वेद विषयक एक लेख पढ़ने में आया, जिसका शीर्षक है— "मानव को माधव बनाते हैं वेद'। इस लेख को लिखा है सुश्री स्मिता ने। साथ ही 'वैदिक दर्शन' इस उपशीर्षक के लेखक हैं विश्व हिन्दू परिषद् की प्रबन्ध समिति के संरक्षक सम्मान्य श्री दिनेशचन्द्र जी। पूरे लेख में ऋग्वेदादि चारों वेदों के महत्व, उपयोगिता और प्रचार का अति संक्षेप से उल्लेख किया गया है। यह सब तो ठीक है, परन्तु कुछ बातें अयथार्थ होने के कारण उनके संकुचित एवं एकपक्षीय दृष्टिकोण की सूचक हैं, जिनका आगे उल्लेख किया जा रहा है। सबसे बड़ा आश्चर्य इस बात को देखकर हुआ कि सम्पूर्ण लेख में कहीं पर भी आधुनिक युग के महान् वेदज्ञ और वेदभाष्यकार तथा आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का नामोल्लेख तक नहीं किया गया है। महर्षि दयानन्द द्वारा वेदों का प्रचार—प्रसार तथा विगत उन्नीसवीं शताब्दी से आज तक उनके अनुयायी आर्य विद्वानों के द्वारा होता आ रहा है और आगे भी होता रहेगा। लगता है, कुछ महानुभावों का किसी न किसी निमित्त से स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और आर्यसमाज से वैर तो नहीं कहना चाहिए किन्तु परहेज अवश्य है। यह प्रमाणित तथ्य है कि अनेक प्रकार के समाज—सुधारों, सनातन वैदिक संस्कृति, संस्कृत भाषा का प्रचार और कुरीतियों के निवारण से लेकर भारतीय स्वातन्त्र्य—संग्राम के मूल प्रेरक और मातृभूमि की रक्षा के लिए समर्पित होने के कारण ऋषि दयानन्द को नव—जागरण के पुरोधा के रूप में जाना जाता है। इसके साथ ही वेदों, वेदांगों, शड्—दर्शनों और प्राचीन ऋषि—मुनियों के द्वारा रचित अनेक आर्ष—ग्रन्थों के अध्ययन—अध्यापन तथा शोधकार्यों के द्वारा अभिनव साहित्य का सृजन ऋषि दयानन्द के विचारों पर आधारित बालक—बालिकाओं के अनेक गुरुकुलों तथा अन्य शिक्षा—संस्थाओं के द्वारा किया जा रहा है। इस सबको देखते हुए, ऋषि दयानन्द के योगदान को प्रशंसित करने की अपेक्षा, ओझल कर देना कहां तक उचित है? इसे लेखक—द्वय को विचार करना चाहिए।

सन्दर्भित लेखक लिखते हैं, वेद की तीस हजार एक सौ इकतीस शाखायें और उपशाखायें थीं। यह कथन ठीक नहीं है। क्योंकि पातंजल व्याकरण महाभाष्य में लिखा है कि प्राचीन काल में चार मूल वेदों के सहित एक हजार एक सौ इकतीस शाखायें थीं न कि तीस हजार एक सौ इकतीस। अब तो केवल 12—13 शाखायें ही मिलती हैं। लेखक द्वारा 104 शाखाओं का मिलना अप्रामाणिक कथन है।

वे पुनः लिखते हैं, मानवधर्म के आधार महान् वेदज्ञ रामानुजाचार्य, माधवाचार्य, शंकराचार्य आदि के पदचिन्हों पर चलते हुए आज भी दक्षिण भारत में हजारों की संख्या में वेदाचार्य हैं। प्रश्न है क्या भारत के अन्य प्रान्तों में वेद के विद्वान् नहीं हैं? प्रतीत होता है कि लेखक का अभिप्राय उक्त आचार्यों के मठों से हैं, जबकि ये आचार्य वेदान्त दर्शन के ही विशेषज्ञ हुए हैं, न कि वेदों के विशेषज्ञ।

लेखक ने उपनिषद् के मन्त्र 'सह नाववतु सह नो भुनक्तु' को भोजन के आरम्भ में पढ़ने पर बल दिया है जबकि उसका भोजन से कोई संबंध नही है। भुज पालनाभ्यचहारयोः धातु का भुनक्तु रुप पालन करने के अर्थ में लोट् प्र.पु. में होता है। वस्तुतः यह मन्त्र गुरु—शिष्य के पठन—पाठन विषयक है, तभी तो मन्त्रान्त में कहा गया है, 'तेजस्वि नावधीतमस्तु' हमारा पढ़ा तेजस्वी होवे। इति।

किराये की गाड़ी

—महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी

किराये की गाड़ी एक दुर्गम जंगल से जा रही है। उसमें एक सवार बैठा है। गाड़ी में से बार–बार आवाज आती है–''किराया दो, किराया दो।'' सवार जल्दी–जल्दी किराये की माँग से अत्यन्त दुःखी हो गया है। गाड़ी दो पग चलती है तो पुनः किराया देने का आदेश होता है। मार्ग बड़ा वीहड़ है। बिना गाड़ी के लक्ष्य–स्थान पर पहुँचना कठिन ही नहीं, प्रत्युत असम्भव–सा है, परन्तु सवार अब तो अत्यन्त दुःखी हो चुका है। गाड़ीवान सवार का पहले ही बहुत कुछ खर्च करा चुका है। कभी गाड़ी पर रंग–रोगन करा दो। गाड़ी ठहरने के लिए एक उत्तम स्थान बनवा दो। घोड़ो के लिए नाना प्रकार का उत्तम घास, बढ़िया दाना और ऐसी ही अन्य आवश्यक वस्तुएँ इकट्ठी कर दो। घोड़ों के लिए बढ़िया झूल, गाड़ी की सजावट के लिए अन्य सारा सामान तथा सारा साज आदि ले–दो।

इस क्रय–विक्रय में सवार को लक्ष्य–स्थान की ओर जाते हुए कभी–कभी स्थान–स्थान पर ठहरना पड़ता था और समय नष्ट हो जाता था। इतनी बातों के पश्चात् भी किराये की माँग सदा होती रहती थी। इधर उसे लक्ष्य–स्थान पर शीघ्र पहुँचना था। उधर गाड़ीवान तंग कर रहा था कि गाड़ी का पहला रोगन खराब हो चुका है, अब दोबारा करा लिया जाए। कहने का तात्पर्य यह है कि इसी प्रकार सवार को तंग किया जा रहा है और उसे लक्ष्य–स्थान पर पहुँचने में व्यर्थ देरी लगाई जा रही है।

पाठक! यह सवार कौन है? ये सवार आप ही हैं। आश्चर्य में न पड़ें। सचमुच आप ही सवार हैं। आप एक किराये की गाड़ी पर सवार हैं, जिसका स्वामी सदा किराया माँगता रहता है। यदि थोड़ी देर के लिए हवा–प्राणवायु न मिले तो अन्दर से आवाज आती है–निकलो बाहर।

यदि चौबीस घण्टे तक पानी न मिले तो आवाज आती है–निकलो बाहर। यदि चार–पांच दिन भोजन न मिले तो आवाज आती है–निकलो बाहर। ऐसी किराये की गाड़ी में बैठकर जिसका स्वामी एक–एक मिनट में किराया माँगता है, आप उस गाड़ी को अपनी कैसे कह सकते हैं? ये किराये की गाड़ी जिसे आप अपना समझे बैठे हैं, आपका शरीर है। लक्ष्य–स्थान, प्रभु–प्राप्ति तक पहुँचने के लिए गाड़ी की आवश्यकता है, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि आप इसको अपनी ही गाड़ी समझ लें और इसकी सजावट में ही समय नष्ट कर दें। इस शरीररूपी गाड़ी को किराया देना तो आवश्यक है, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि आप इस किराये की गाड़ी को अपना समझ और मानकर बजाए लक्ष्य–स्थान पर पहुँचने के इस गाड़ी के रख–रखाव, सजावट और भूषित करने में ही समस्त आयु नष्ट कर दें और लक्ष्य की ओर एक पग भी न चलें। गाड़ी के घोड़ों को खिलाने–पिलाने में अधिक समय नष्ट करना मूर्खता है।

हे किराये की गाड़ी पर सवार लोगों! इस सूक्ष्म बात को समझो और देखो कि क्या तुम्हारा यह कर्त्तव्य है कि तुम गाड़ी की सजावट में सारा समय नष्ट कर दो अथवा तुम्हारा यह कर्त्तव्य है कि इसे साधारण किराया देकर इसे शीघ्रता के साथ लक्ष्य–स्थान की ओर चलने के लिए हाँको और जितनी शीघ्र हो सके, इसे वहाँ ले–चलो।

चन्दन के कोयले न बनाओ

—महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी

सुनसान जंगल में एक लकड़हारे से पानी का लोटा पीकर प्रसन्न हुआ राजा कहने लगा—''हे पानी पिलानेवाले! किसी दिन मेरी राजधानी में अवश्य आना, मैं तुम्हें पुरस्कार दूँगा।'' लकड़हारे ने कहा—बहुत अच्छा।

इस घटना को घटे पर्याप्त समय व्यतीत हो गया। अन्ततः लकड़हारा एक दिन चलता—फिरता राजधानी में जा पहुँचा और राजा के पास जाकर कहने लगा—''मैं वही लकड़हारा हूँ, जिसने आपको पानी पिलाया था।'' राजा ने उसे देखा और अत्यन्त प्रसन्नता से अपने पास बिठाकर सोचने लगा कि ''इस निर्धन का दुःख कैसे दूर करूँ?'' अन्ततः उसने सोच—विचार के पश्चात् चन्दन का एक विशाल उद्यान—बाग उसको सौंप दिया। लकड़हारा भी मन में प्रसन्न हो गया। चलो अच्छा हुआ। इस बाग के वृक्षों के कोयले खूब होंगे। जीवन कट जाएगा।

यह सोचकर लकड़हारा प्रतिदिन चन्दन काट—काटकर कोयले बनाने लगा और उन्हें बेचकर अपना पेट पालने लगा। थोड़े समय में ही चन्दन का सुन्दर उद्यान—बगीचा एक वीरान स्थल बन गया, जिसमें स्थान—स्थान पर कोयलों के ढेर लगे थे। इसमें अब केवल कुछ ही वृक्ष रह गये थे, जो लकड़हारे के लिए छाया का काम देते थे।

राजा को एक दिन यूँ ही विचार आया। चलो, तनिक लकड़हारे का हाल देख आएँ। चन्दन के उद्यान का भ्रमण भी हो जाएगा। यह सोचकर राजा चन्दन के उद्यान की ओर जा निकला। उसने दूर से उद्यान से धुआँ उठते देखा। निकट आने पर ज्ञात हुआ कि चन्दन जल रहा है और लकड़हारा पास खड़ा है। दूर से राजा को आते देखकर लकड़हारा उसके स्वागत के लिए आगे बढ़ा। राजा ने आते ही कहा—''भाई! यह तूने क्या किया?'' लकड़हारा बोला—''आपकी कृपा से इतना समय आराम से कट गया। आपने यह उद्यान देकर मेरा बड़ा कल्याण किया। कोयला बना—बनाकर बेचता रहा हूँ। अब तो कुछ ही वृक्ष रह गये हैं। यदि कोई और उद्यान मिल जाए तो शेष जीवन भी व्यतीत हो जाए।''

राजा मुस्कराया और कहा—''अच्छा, मैं यहाँ खड़ा होता हूँ। तुम कोयला नहीं, प्रत्युत इस लकड़ी को ले—जाकर बाजार में बेच आओ।'' लकड़हारे ने दो गज(लगभग पौने दो मीटर) की लकड़ी उठाई और बाजार में ले—गया। लोग चन्दन देखकर दौड़े और अन्ततः उसे तीस रुपये मिल गये।

लकड़हारा मूल्य लेकर रोता हुआ राजा के पास आया और जोर—जोर से रोता हुआ अपनी भाग्यहीनता स्वीकार करने लगा।

इस कथा में चन्दन का बाग मनुष्य का शरीर है। इसका एक—एक श्वास चन्दन का वृक्ष है। जब ईश्वररूपी राजा ने किसी कर्म अथवा ईश्वरभक्ति से प्रसन्न होकर मनुष्य को शरीररूपी बाग देता है तो मनुष्य के सुख—सौभाग्य तथा धनाढ्य होने का समय आता है, परन्तु कष्ट! महाकष्ट!! मूर्ख मनुष्य इसे विषयभोग की अग्नि में जला—जलाकर कोयला कर देता है। हम सब भी ऐसा ही कर रहे हैं, परन्तु अभी चन्दन के वृक्ष शेष हैं। आओ, इनसे लाभ उठाएँ।

मानव–चक्षु

–वैद्यरत्न प्रताप सिंह

मनुष्य को भगवान् ने नेत्र एक ऐसी चीज दी है कि जिसकी रक्षा से वह संसार के विविध प्रकार के सौन्दर्य का निरीक्षण कर ईश्वर की सत्ता का अनुभव कर सकता है और संसार के वैभव का उपयोग कर आनन्द अनुभव कर सकता है।

योगिजन विविध प्रकार के योगाभ्यास के द्वारा ललाट के मध्य में दृष्टि को स्थिर करके तेजः पुंजमय आत्मप्रकाश का अवलोकन करते हैं।

वैज्ञानिक सूक्ष्मदर्शी पुरूषों ने अनेक यन्त्रों की सहायता से एक इंच के दस हजारवें सूक्ष्म भाग को भी चक्षु–इन्द्रियद्वारा प्रत्यक्ष कर अनेक क्रान्तिकारी अविष्कारों को करके युग परिवर्तन कर दिया है और कर रहे हैं। ऐसे नेत्रों की हम अवहेलना करें, इससे अधिक चिन्तनीय क्या हो सकता है?

हमारा देश उच्च वातावरण का है। यहाँ की तीव्र सूर्यरश्मियाँ आँखों को अधिक हानि पहुँचाने वाली है। इसीलिये हमारे देश में तिमिर आन्ध्य (Cataract) मोतियाबिंद आदि अनेक नेत्ररोग बहुतायत से पाये जाते हैं। इसीलिये प्राचीन आर्यवैद्यों ने नेत्ररक्षा के लिये अनेक प्रकार के अंजनों का अविष्कार किया था। किंतु खेद है कि आज इस नव सभ्यता के युग में इनका प्रचार दिनोदिन न्यूनातिन्यून होता चला जा रहा है और नेत्रक लगाने का रिवाज दिनोदिन बढ़ रहा है। बेचारे छोटे–छोटे बालक भी नेत्रक(चश्मे) के बिना देख नहीं सकते और जीवन के आरम्भ काल में ही आन्धयत्व का अनुभव करते हैं। इस दयनीय दशा को देखकर मैंने अपने जीवन में अनेक अनुभव नेत्ररक्षा के लिये किये हैं। यह अनुभव बहुत सुगम और सरल है। आशा है संसार का कल्याण चाहने वाले विज्ञ पाठक इनका वितरण कर धर्मलाभ लेंगे।

आर्यवैद्यक शास्त्र ने सर्वप्रथम आँख की रक्षा के लिये व्यायाम बताया है। इस व्यायाम की तीन विधियाँ प्रधान हैं। उसमें प्रथम दिन में तीन बार मुख में शीतल जल भरकर आँख में शीतल जल के छींटे लगाना है। इस अभ्यास के द्वारा अनुभव से यह सिद्ध हुआ है कि मुँह में शीतल जल का गण्डूश भरकर आँख बंद करके हाथ के चुल्लू में पानी लेकर आँख पर जोर से छींटे दें। ऐसे छींटे कम–से–कम तीस बार एक–एक आँख पर देने चाहिए और अधिक–से–अधिक एक–एक सौ तक बढ़ाना चाहिये। छींटे देने के बाद आँखें धोकर कपड़े से पोंछ लें और उसके बाद पंद्रह मिनट तक लिखने–पढ़ने या अग्नि के पास जाने का काम न करे। अच्छा तो यह होगा कि आँखें बंदकर भगवान् का ध्यान करें जिससे आँखों को इस व्यायाम के बाद विश्राम मिल जाय। ऐसा त्रिकाल करने से आँखों में किसी प्रकार का विकार पैदा नहीं होता और आँखें निर्मल तथा स्वच्छ रहती हैं। इस विधि को स्मरण रखने के लिए आचार्यों ने निम्नलिखित श्लोक बना दिया है–

शीताम्बुपूरितमुखः प्रतिवासरं यो
वारत्रयेऽपि नयनद्वितयं जलेन।

सिंचत्यसौ स मुदमेति कदापि नाक्षि
रोगव्यथाविधुरतां भजते मनुष्यः।।

दूसरा व्यायाम त्राटक का है। यह विधि सरल है और प्रत्येक व्यक्ति को पांच से दस मिनट तक करनी चाहिये। एक सफेद कागज को एक फुट चौरस गत्ते पर चिपकाकर ठीक उसके मध्य में काजल से एक गहरा काला बिन्दु आधा इंच परिधि का लगा दें। इस गत्ते को अपने सामने दो फुट की दूरी पर रखकर सिद्धासन, पद्मासन या सहज आसन में बैठकर मन को एकाग्र करके इष्टदेव का जप करते हुए इस बिन्दु को दोनों आँखों से देखें और पलक बिलकुल न गिरने दें। आँखों में पानी आने पर अथवा थकने पर आँखें बंद कर लें। दो–तीन मिनट बंद रखने के बाद फिर इसका अभ्यास करें। ऐसा दो–तीन बार करके दस मिनट में सारा अभ्यास समाप्त कर दें। इस व्यायाम को करने से मोतियाबिंद का रोग नहीं होता और आँखों की रोशनी सुदृढ़ रहती है।

योगी लोग इस त्राटक की बड़ी प्रशंसा करते हैं। जो पाठक इसका अभ्यास करना चाहें वे ''हठयोगप्रदीपिका'' आदि योगग्रन्थों का विशेषरूप से अध्ययन करें।

तीसरा व्यायाम पतंग उड़ाने का है, जितनी पतंग ऊँची चढ़ेगी और उसको बायाँ–दायाँ ऊँचा–नीचा बार–बार घुमाने में आँखों का अच्छा व्यायाम हो जाएगा, यह व्यायाम पंद्रह मिनट से तीस मिनट तक करना पर्याप्त है। आजकल जो पाश्चात्त्य नेत्रचिकित्सक थम्मिंग(Thumbing) या सनिंग(Sunning) आदि व्यायाम बताते हैं, उनकी अपेक्षा पतंग उड़ाने का व्यायाम निर्दोष, सरल और मनोविनोदी होता है। जो व्यक्ति ये तीनों प्रकार के व्यायाम न कर सकें, उनके लिये नीचे लिखी औषधियों का प्रयोग नेत्रदृष्टि को बलवान् करने के लिये हितकर है–

1. एक छटांक शुद्ध मधु(काश्मीरी) लेकर उसमें तीन माशा बरास कपूर मिलाकर खरल में घोटकर काँच के ढकने की शीशी में डालकर रखें और प्रतिदिन प्रातः और सायंकाल अंजन करके जब तक आँख से पानी निकलता रहे, आँख बंद करके बैठे रहें, बाद में शीतल जल से आँख को धो डालें और दस मिनट तक लिखने–पढ़ने का काम न करें।

2. जिनको मधु मिलने में कठिनाई या संदेह हो वे नीचे लिखा हुआ द्रव बना लें और उसको ड्रापर या रूई से आँख में पाँच–पाँच बूँद टपका लें और आँख को पाँच मिनट तक बंद रखकर लेटे रहें और बाद में आँख को धोकर अपना काम करें। जिन बच्चों या अन्य व्यक्तियों की आँखों में कीचड़ आता हो, उनके लिये इस द्रव का रात को सोते समय और सुबह उठते ही उपयोग अत्यंत हितकर है। इस द्रव को मैंने लाखों रोगियों पर प्रयोग किया है और प्रतिवर्ष हजारों रोगी इसका लाभ हमारे अस्पतालों में उठाते हैं। पुल्लि का द्रव के नाम से यह वितरित होता है। इसकी निर्माण विधि निम्नलिखित है–

उत्तम गुलाब जल–दस छटाँक(एक बोतल), सफेद फिटकरी–एक तोला, सफेद सेंधा नमक–एक तोला, बीकानेरी मिश्री–एक तोला।

इन सबको पीसकर गुलाब जल में भली–भाँति घोल दें और छानकर काँच के डाँट वाली बोतल में उपयोग के लिये रख दें। इसमें कभी–कभी हवा लगने से जाले से पड़ जाते हैं। उस समय इसको फिरसे एक साफ कपड़े में छान लेना चाहिए। इस तरह बार–बार छानकर रख लेने से यह वर्षों तक काम देता है।

जिनकी आँखे उठ आयें या जिनकी आँखों में रोहे हो गये हों, उनकी आँख में इस अर्क को डालकर और ऊपर इसी अर्क में रूई का फोहा भिगोकर बाँध देने से जल्दी लाभ होता है। यह द्रव प्रत्येक गृहस्थ को अपने घर में बनाकर रखना चाहिए।

3. जिनकी आँखों में मोतियाबिंद होने का भय हो या आँखों की रोशनी बहुत कम हो गई हो, वे इस निम्नलिखित औषधि का निर्माण कर निरन्तर उपयोग करके लाभ उठायें। औषधि बनाने की विधि इस प्रकार है–

शुद्ध सरसों का तेल–एक छटाँक, नीम की कोपलें(हरी)–एक तोला।

नीम की कोपलों को पीसकर और टिकिया बनाकर तेल में रखकर एक ढक्कनदार शीशी मे बंद करके खुली छत पर पंद्रह दिन तक रहने दें। इसमें सूर्य और चन्द्र के प्रभाव से विशेष गुण उत्पन्न होता है। बाद में इसको छानकर और फिर इसमें तीन माशा बरास कपूर डाल दें तथा इसका अंजन सलाई से प्रतिदिन सोते समय करें।

4. जिनको मोतियाबिंद और आँख में फूल आदि का कष्ट हो, उनको नीचे लिखा हुआ योग लाभकारक होगा। पुनर्नवा आजकल सर्वत्र मिलती है। इसको जड़समेत उखाड़कर धोकर सिल पर बारीक पीसकर कपड़े से निचोड़कर एक छटाँक रस निकाल लें और उस रस में तीन माशा बरास कपूर और डेढ़ माशा पिपरमिंट मिलाकर एक सप्ताह तक रख दें। बाद में फलालैन से छानकर काँच के डॉट की शीशी में भरकर रख लें और सोते समय सलाई से इसका अंजन करें।

कई एक व्यक्तियों को आँख की बीमारी पेट के कारण होती है। उनको किसी विज्ञ चिकित्सक से रोग का निर्णय कराकर सप्तामृत लौह, त्रिफला या महात्रिफलाद्य घृत का सेवन करना लाभदायक है।

नेत्रों को सदा तीक्ष्ण भास्कर तथा सूक्ष्म और भयंकर चीजों को देखने से बचाना चाहिये। नेत्र ही मनुष्य के लिये सर्व सुख हैं। ''मीच गयीं आँखें तो धन किस काम का।'' सिनेमा देखने से भी आँखों को बहुत हानि होती है।

बच्चों को उलटियाँ–एक रामबाण औषधि

प्रायः ५–६ वर्ष तक के बच्चों (विशेषकर जो लंबे अर्से तक माँ के दूध पर ही रहते हैं)–को किसी भी समय अनवरतरूप से उल्टियाँ होती हैं। ज्यों ही बच्चा दूध पीता है या कुछ भी खाता–पीता है, उलट देता है। ऐसी स्थिति में एक कुशल गृहिणी के लिए यह रामबाण औषधि बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। बाजार में कमलगट्टा नाम से एक औषधि कठोर गोली–सी मिलती है। उसे स्वच्छ पत्थर या चकले पर घिस लीजिये और एक चम्मच में उसे उतार लीजिये। बस, बच्चे को उलटी होने के दस–पंद्रह मिनट बाद दे दीजिये। कम–से–कम तीन बार दिन में दीजिये। परहेज कोई नहीं।

गरमी की ऋतु में ठंडे पानी के साथ और सर्दी में कुनकुने जल के साथ दी जानी चाहिए।

ऋषिभक्त आर्यसमाज–अनुयायी एक प्रौढ़ व्यक्तित्व का परिचय

ऋषिभक्त आर्यसमाजी श्री आदित्य प्रताप सिंह

–मनमोहन कुमार आर्य

देहरादून में ऋषि दयानन्द का दो बार आगमन हुआ और उनके यहां वेद प्रचार व व्याख्यानों से धार्मिक वातावरण में सत्यासत्य विषयक चर्चा आरम्भ हुई थी। यहां ऋषि दयानन्द ने सभी मतों के लोगों से भेंट कर उन्हें वैदिक मत की श्रेष्ठता से परिचित कराने का प्रयास किया था। उनके प्रभाव से जन्म से मुस्लिम एक सज्जन मोहम्मद उमर ने परिवार सहित शुद्धि कराकर अलखधारी नाम धारण किया था। देहरादून में धामावाला बाजार में एक दादूपंथी साधुओं का आश्रम था जिसका नाम था महानन्द आश्रम। इस मठ के स्वामी महानन्द जी ने स्वामी दयानन्द जी का हरिद्वार में सत्संग प्राप्त कर वैदिक धर्म को अपनाया था और अपने आश्रम को आर्यसमाज का मन्दिर व गतिविधियों का केन्द्र बनाया था। तब से यहां आर्यसमाज कार्यरत है और देहरादून नगर में एक दर्जन से अधिक अन्य आर्यसमाजें भी कार्यरत हैं। 80 वर्षीय श्री आदित्य प्रताप सिंह ऋषिभक्त एवं आर्यसमाजी हैं। उनकी प्रमुख उपलब्धि यह है कि वह सन् 1988 से ऋषि दयानन्द जन्म भूमि टंकारा में प्रतिवर्ष जा रहे हैं। कुछ वर्ष कई कारणों से नहीं भी जा सके। इस वर्ष भी वह 11 फरवरी, 2020 को प्रस्थान कर रहे हैं और हैदराबाद और औरंगाबाद के कुछ स्थानों का भ्रमण कर वहां से द्वारका पहुंचेंगे। द्वारका से 18 फरवरी, 2020 को वह टंकारा पहुचेंगे। टंकारा में वह ऋषि जन्मोत्सव एवं बोधोत्सव पर्व में उपस्थित रहेंगे। देहरादून में हमें ऐसे किसी व्यक्ति का ज्ञान नहीं है जो टंकारा इतनी अधिक बार गया हो। उनका यही गुण उनकी प्रशंसा का कारण है। आर्यसमाज से भी वह जुड़े हुए हैं और आर्यसमाज धामावाला तथा आर्यसमाज लक्ष्मण–चौक के साप्ताहिक सत्संगों सहित वह जिले के प्रायः सभी समाजों व आर्य संस्थाओं के उत्सवों में सम्मिलित होते हैं। उनका संक्षिप्त परिचय हम इस लेख में प्रस्तुत कर रहे हैं।

श्री आदित्य प्रताप सिंह का जन्म फैजाबाद, उत्तर प्रदेश के शहर अंगूरीबाद में एक क्षत्रिय परिवार में 5 अगस्त, 1939 को माता श्रीमती पाटन राज और पिता श्री चिन्तामणी सिंह जी के यहां हुआ था। आपके पिता श्री चिन्तामणि जी यहां आर्यसमाज द्वारा संचालित मिडल स्कूल में प्रधान अध्यापक थे। आप तीन भाईयों में सबसे छोटे हैं। अंगूरीबाद शहर के ही राजकरण वैदिक पाठशाला से आपने सन् 1956 में कक्षा 10 उत्तीर्ण की तथा इसके बाद सन् 1958 में इसी स्थान के मोतीलाल इण्टर कालेज से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपके पिता ने आपको बी०ए० में प्रवेश लेने को कहा परन्तु आपने नौकरी करना पसन्द किया और सन् 1958 में फैजाबाद में ही विद्युत विभाग में आपकी नियुक्ति हो गई। यहां आप चार वर्ष कार्यरत रहे। सन् 1962 में आप सिंचाई विभाग, उत्तर प्रदेश में कनिष्ठ लिपिक के पद पर नियुक्त हुए। सिंचाई विभाग में कार्य करते हुए आपके फैजाबाद (4 वर्ष), लखनऊ (3 महीने), बहराइच (3 महीने), फैजाबाद (1 वर्ष), कालागढ़ (4 वर्ष), लखनऊ (4–5 महीने) तथा देहरादून आदि स्थानों

पर स्थानान्तरण हुए। माह जून, सन् 1971 से निरन्तर देहरादून में सेवारत रहे और यहीं से आपने सिंचाई विभाग के मुख्य अभियन्ता, यमुना परियोजना के कार्यालय से सेवानिवृत्ति प्राप्त की।

आपका बचपन का स्कूल आर्यसमाज मन्दिर में ही था। यदा–कदा आप बचपन में पिता के साथ समाज के सत्संगों में भी जाते थे। सन् 1959 में बीस वर्ष की आयु में आपका विवाह निकटवर्ती स्थान पर ही आयु. कलावती सिंह जी से हुआ था। सन् 1971 में देहरादून आने पर आप यहां की आर्यसमाज धामावाला के सदस्य बने और अक्टूबर, 1984 तक रहे। आपने देहरादून में गोविन्दगढ़ में अपना दो मंजिला निवास स्थान बनाया। आर्यसमाज लक्ष्मण–चौक आपके निवास से लगभग 1 किमी. की दूरी पर ही है। अतः आप वहां के सदस्य बन गये। वर्तमान में भी आप वहीं के सदस्य हैं और इस समाज में अनेक बार अधिकारी भी रहे हैं।

श्री आदित्य प्रताप सिंह जी ने अपने जीवन में अनेक बार देश भ्रमण के लिये लम्बी लम्बी यात्रायें की हैं। कन्याकुमारी आना–जाना इनके लिये सामान्य बात है। एक ही बार में वह आधा दर्जन व इससे अधिक प्रमुख स्थानों का भ्रमण कर आते हैं। अपने साथ आप अपने मित्रों व उनके परिवारों का समूह बनाकर ले जाते हैं। उनके द्वारा देश के जिन स्थानों का भ्रमण किया गया हैं उनमें से प्रमुख स्थान हैं कन्याकुमारी, रामेश्वरम्, हैदराबाद, तंजावुर, मदुरै, त्रिवेन्द्रम, बंगलौर, ऊंटी, मैसूर, मुम्बई, गोआ, सोमनाथ मन्दिर, द्वारका, भुवनेश्वर, कोलकत्ता, गंगासागर, जोधपुर, बीकानेर, जयपुर, मेड़ता–सिटी, अजमेर, उदयपुर, चित्तौड़, माउण्ट–आबू, दिलवाड़ा, खजुराहो, अजन्ता–अलोरा, बदरीनाथ, केदारनाथ, चकराता आदि। ऐसे अनेक स्थान हैं जहां आप आधा दर्जन से अधिक बार गये हैं। श्री आदित्य प्रताप जी उदयपुर को सबसे अच्छा शहर बताते हैं। वह कहते हैं कि यह शहर तीन दिशाओं में झीलों से घिरा हुआ है। महाराणा प्रताप का जन्म–स्थान होने से भी इसका महत्व है।

आर्यसमाज के विषय में आप कहते हैं कि मनुष्य की बुद्धि का जैसा उत्तम विकास आर्यसमाज में जाने से होता है वैसा किसी मत–मतान्तर के लोगों का नहीं होता। आर्यसमाज में विद्वानों के उपदेश व सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय से हमें धार्मिक व सामाजिक विषयों को उनके यथार्थरूप में समझने की शक्ति मिलती है। वह कहते हैं कि आर्यसमाज से इतर किसी धार्मिक व सामाजिक संस्था में ईश्वर द्वारा सृष्टि के आदि में दिया गया ज्ञान पढ़ने की प्रेरणा नहीं की जाती। किसी संस्था को वेदों का यथार्थ ज्ञान भी नहीं है। इसी कारण से सभी संस्थायें धर्म नहीं सम्प्रदाय हैं। आर्यसमाज हमें वेदज्ञान से परिचित कराता है व उसका अध्ययन करने की प्रेरणा व उसका सरल हिन्दी भाष्य भी उपलब्ध कराता है। श्री आदित्य प्रताप जी नियमित रूप से आर्यसमाज के सत्संगों व उत्सवों में जाते हैं। वह देहरादून जिले की सभी समाजों के उत्सव गुरुकुलों व तपोवन आदि के उत्सवों सहित वृहद्–यज्ञों के आयोजनों में भी उपस्थित होते हैं। उनका एक गुण पैदल चलना है। वह साइकिल व किसी अन्य वाहन का प्रयोग नहीं करते हैं। वर्षों से वह प्रत्येक सप्ताह अपने घर से लगभग 2.5 किमी. दूरी पैदल तय कर हमसे मिलने आते हैं और पैदल ही लौटते हैं। अब भी वह 10 किमी. व इससे अधिक पैदल चलते व चल सकते हैं। हम ऋषिभक्त एवं आर्यसमाज के निष्ठावान सदस्य श्री आदित्य प्रताप सिंह जी को शुभकामनायें देते हैं और उनके स्वस्थ एवं दीर्घजीवन की कामना करते हैं।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले दानदाताओं की सूची दिनांक 15 अक्टूबर 2019 से 30 जनवरी 2020 तक

क्र.स.	नाम	धनराशि
1	श्री राजेन्द्र छाबड़ा, रोहतक	1100
2	श्री मदन मोहन आर्य, देहरादून	1100
3	श्री राजेन्द्र छाबड़ा, रोहतक	5100
4	कृष्णा सेठी जी, हरियाणा	1100
5	श्री एन०एस० आहलूवालिया, देहरादून	1500
6	श्री सत्यदेव सिंह, मथुरा	1000
7	श्री रघुवीर सिंह आर्य, पिलखुआ	1100
8	श्री दीपचन्द्र विजयकुमार जी, कीरतपुर	11000
9	श्री ललित मोहन पाण्डेय जी, देहरादून	1000
10	श्री नीरज गोगिया जी, रोहिणी	2100
11	श्रीमती मंजू सिंह, आर्य समाज सु०नगर	5000
12	श्री दर्शन कुमार कुकरेजा, नई दिल्ली	20000
13	आर्य समाज मसूरी	1100
14	श्री प्रेम प्रकाश शर्मा, देहरादून	2000
15	श्री वरूण आर्य, देहरादून	1100
16	श्रीमती विमला गुप्ता जी, नई दिल्ली	2000
17	श्रीमती शान्ति गुप्ता जी, दिल्ली	2000
18	रिचा जी, दिल्ली	2100
19	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000
20	सुशीला भाटिया जी, पानीपत	1100
21	श्री रघुनाथ आर्य जी, देहरादून	2100
22	डा० जयदत्त उप्रेती जी, अल्मोड़ा	5000
23	श्री रोहित जी, रायपुर	3500
24	श्री डी०पी० जयसवाल, कोलकाता	6000
25	रत्ना जयसवाल जी, अहमदाबाद	5000
26	श्री अशोक रावत जी, देहरादून	4000
27	श्रीमती एस० चड्ढ़ा, दिल्ली	5000
28	श्रीमती एस० चड्ढ़ा, दिल्ली	5000
29	श्रीमती एस० चड्ढ़ा, दिल्ली	10000
30	आचार्य आशीष जी, तपोवन	5000
31	आचार्य आशीष जी, तपोवन	5000
32	श्री श्रुतांत जी, देहरादून	1100
33	अनूषा मह जी, कर्नाटक	2000
34	जयश्री मह जी, कर्नाटक	2000
35	डा० साक्षी डंग जी, लुधियाना	2000
36	श्री तेजपाल सैनी जी, अलवर	1500
37	आचार्य जयप्रकाश जी, हरिद्वार	1000
38	श्री गौतम सिंह जी, बीकानेर	3500
39	श्री राम पांड़े जी, बीकानेर	1100
40	डा० संजय गर्ग जी, बीकानेर	3500
41	डा० मनोज गुप्ता जी, बीकानेर	1500
42	श्री वेदमुनि एवं प्रभा जी, हरिद्वार	5100
43	श्री जयपाल सिंह जी, सहारनपुर	1000
44	डा० अशोक जी, सहारनपुर	2000
45	श्री तुलसीदास एवं सुशीला जी, हिसार	2100
46	श्रीमती किरन जी, गोवा	1100
47	श्री जब्बर सिंह आर्य जी, सहारनपुर	2100
48	श्री धर्मवीर जी, सहारनपुर	1500
49	माता नरेन्द्र आर्य बब्बर जी, तपोवन	1200
50	श्री के० पाल जी, तपोवन	1000
51	श्रीमती कृष्णा ठाकुर जी, दिल्ली	11000
52	श्रीमती ईश्वरी देवी टूटेजा जी, सोनीपत	5100
53	श्री डी०पी० जयसवाल, कोलकाता	21000
54	श्री महिन्द्रा जी एवं कृष्णा जी	2500
55	श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी,	1100
56	श्री सत्यपाल आर्य जी, देहरादून	7000

वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले दानदाताओं की सूची दिनांक 15 अक्टूबर 2019 से 30 जनवरी 2020 तक

क्र.स.	नाम	धनराशि
57	श्री रमेश टांगड़ी जी, देहरादून	2000
58	श्री अनुज कुमार, सहारनपुर	1000
59	श्री संतोष द्विवेदी, देहरादून	1800
60	आरती खट्टर जी, दिल्ली	5000
61	ज्योति जी, पौंटा साहिब	2000
62	श्री राहुल जी, देहरादून	1500
63	राखी डंग जी, लुधियाना	2000
64	सरला डंग जी, पौंटा साहिब	1000
65	साक्षी डंग जी, लुधियाना	2000
66	दीपक अग्रवाल जी, आगरा	1100
67	श्री के० पाल जी, तपोवन	2000
68	श्रीमती धर्म देवी जी, नई दिल्ली	1000
69	श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी, दिल्ली	1100
70	श्री देवेन्द्र गांधी जी, नौएड़ा	10000
71	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000
72	श्री महेन्द्र सिंह जी, दिल्ली	5100
73	श्री नागेन्द्र आर्य जी, बिहार	4000
74	श्री रघुनन्दन साह जी, बिहार	1000
75	श्री कमल देव आर्य, बिहार	2500
78	श्री कनिष्क आर्य, सोनीपत	1500
79	श्री आनन्द मुनि, नेपाल	1100
80	श्री नारायण सिंह जी, राजस्थान	1000
81	श्री किशन लाल जी, दिल्ली	1000
82	श्री नरेन्द्र जी, फरीदाबाद	3100
83	श्री श्याम सिंह, सहारनपुर	1200
84	हंस राज वेद प्रकाश दत्ता ट्रस्ट, दे०दून	10000
85	श्री स्नेह खट्टर जी, देहरादून	2100
86	श्री रघुवीर आर्य, तेलांगना	1000
87	आयुषी जी, लुधियाना	1100
88	श्री तुलसीदास जी, हिसार	1300
89	श्री कुणाल खेड़ा, जलान्धर	1100
90	श्री मनोज गुप्ता, बीकानेर	2500
91	मंजू जी, दिल्ली	1000
92	श्री केवल कृष्ण जी, देहरादून	5000
93	श्री सूरज प्रकाश चावला, बैंगलौर	2100
94	श्री सूरज प्रकाश चावला, बैंगलौर	21000
95	श्री संतोष मुंजाल जी, नई दिल्ली	100000
96	श्री सूरज प्रकाश चावला, बैंगलौर	10000
97	श्री राजीव कुमार जी, देहरादून	2100
98	सीता राम जिंदल फाउण्डेशन, दिल्ली	15000
99	श्री प्रेम प्रकाश शर्मा, देहरादून	1000
100	श्री अंकित खत्री जी, देहरादून	3100
101	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000
102	श्री अशोक सिंह, देहरादून	2100
103	श्री कुल्दीप सिंह जी, देहरादून	1000
104	श्री राम चन्द्र गर्ग जी, लुधियाना	5000
105	श्री इन्द्रजीत मल्होत्रा जी, देहरादून	12000
106	स्व० श्री देव प्रकाश पाहवा जी, नई दिल्ली	31000
107	सुरेखा चौपड़ा जी, नई दिल्ली	2500
108	प्रियंका सिंह जी, दिल्ली	1100
109	श्री अश्विनी बब्बर जी, दिल्ली	2500

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून सभी दानदाताओं का धन्यवाद करता है।

Delite KOM

freedom to work...

DELITE KOM LIMITED

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary: Any infringement is liable for prosecution.

DELITE KOM LIMITED

Kukreja House, IInd Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055

Ph. : 011-46287777, 23530288, 23530290, 23611811 **Fax :** 23620502 **Email :** delite@delitekom.com

ISO 9001 DNV CERTIFIED

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best Compliments From

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

TPM Certified

ISO / TS - 16949 - 2002 Certified

ISO - 14001 Certified

OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्क्स
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com